CHAPTER 24

HINDI

Doctoral Theses

01. अजीत कुमार
यशपाल और जैनेन्द्र के कथा साहित्य में राजनीति और स्त्री की विविध छवियाँ।
निर्देशिका : डॉ. हेमवती शर्मा
Th 24806

सारांश
(असत्यापित)

समय व समाज बद्धता साहित्य का प्रमुख लक्षण होता है। साहित्य के इसी समय व समाज की बद्धता के कारण उसमें तत्कालिक राजनीतिक व वैचारिक उथल-पुथल की अभिव्यक्ति होती है। इस अभिव्यक्ति के माध्यम से साहित्य व साहित्यकार 'सत्ता-विमर्श' से टकराता है, जो राजनीति के मूल में विद्यमान है। यशपाल व जैनेन्द्र के कथा-साहित्य में भी 'सत्ता-विमर्श' की एक संकल्पना विद्यमान है। इसी 'सत्ता-विमर्श' से टकराकर यशपाल और जैनेन्द्र जहाँ एक तरफ अपने कथा-साहित्य में सामाजिक-साँस्कृतिक सम्बन्धों की राजनीति (वैचारिक) करते हैं वहीं दूसरी तरफ स्त्री के प्रगतिशील छवि का निर्माण भी करते हैं। अपने कथा-साहित्य में यशपाल जहाँ मार्क्सवाद के सहारे तत्कालीन यथार्थ को देखने का प्रयास करते हैं तो वहीं जैनेन्द्र गाँधीवाद में आस्था व्यक्त करते हुए तत्कालीन यथार्थ के मानसिक प्रतिक्रिया का वर्णन कर रहे थे। इस प्रकार यशपाल और जैनेन्द्र अपने-अपने कथा-साहित्य में अपनी राजनीतिक दृष्टि के आग्रहों के साथ जिस सामाजिक व मानसिक यथार्थ को व्यक्त करते हैं वह अपने बृहत्तर अर्थों में एक-दूसरे का पूरक साबित होता है। क्योंकि यशपाल जहाँ अपने कथा-साहित्य में समाज के बाह्य राजनीतिक यथार्थ को व्यक्त करते हैं तो वहीं जैनेन्द्र उस राजनीतिक यथार्थ के सूक्ष्म रूप हैं, मानव मन में घटित होने वाली मनःस्थिति का चित्रण करते हैं। मानव के अन्तस् का यथार्थ सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ की क्रिया-प्रतिक्रिया से निर्मित होता है अथवा कमोबेश उसी का परिणाम होता है। इस प्रकार यशपाल तथा जैनेन्द्र के कथा-साहित्य में अभिव्यक्त ये दोनों यथार्थ तत्कालीन समाज के सम्पूर्ण राजनीतिक यथार्थ तथा पूर्ण स्त्री छवि को समझने की एक दृष्टि दे सकते हैं।

विषय सूची

1. रचना में राजनीति 2. हिन्दी साहित्य और स्त्री 3. यशपाल व जैनेन्द्र और उनकी विचारधारा 4. यशपाल व जैनेन्द्र के कथा-साहित्य में राजनीति की छवियाँ 5. यशपाल व जैनेन्द्र के कथा-साहित्य में स्त्री की विविध छवियाँ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

02. अनुराग (अनुपम)
किसान जीवन के संदर्भ में नागार्जुन और फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. मधु वर्मा
Th 24807

सारांश
(असत्यापित)

नागार्जुन तथा फणीश्वरनाथ रेणु का लेखन-काल समान है साथ ही दोनों लेखकों की कथा-भूमि भी एक ही रही है- अंचल में गति कर रहे जीवन को स्वर देना। उनके उपन्यास भले ही किसी अंचल को केन्द्र में रखकर लिखे गये हों परन्तु समूचे देश के किसान-मजदूरों की जीवन-दशा, जीवन-गति तथा जीवन-पथ को लक्षित करते हैं। नागार्जुन तथा रेणु के उपन्यास किसान-जीवन की व्यथा-कथा हैं। समाज में किसान का आधारभूत महत्त्व होता है कारण कि किसान वह संस्था है जो समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता अन्न समेत अन्य तमाम महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से उत्पादन करता है। भारतीय जन-जीवन की बात करें तो स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आज भी भारत किसानों का ही देश है। सेवा क्षेत्र के प्रति बढ़ती रूचि तथा कृषि-व्यवस्था में उपस्थित तमाम कठिनाईयों के बावजूद आज भी भारत जैसे बड़े देश की लगभग 50 प्रतिशत जनता किसानी पर ही निर्भर है। नागार्जुन तथा रेणु दोनों किसानी-परम्परा से संबद्ध रचनाकार है। उनकी जड़ों में भी वही मिट्टी है जिस पर किसान अपना हल चलाता है। यही कारण है कि उनके उपन्यास किसान-जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं। नागार्जुन के उपन्यास कलेवर में लघु होते हुए भी किसान-जीवन की मूल-समस्याओं को तीव्र स्वर प्रदान करते हैं। लेकिन कलेवर की लघुता के कारण किसान-जीवन का व्यापक चित्र रेणु के मुकाबले कम आ पाया है जबकि रेणु के उपन्यास किसान-जीवन को व्यापक फलक पर उभारते हैं। नागार्जुन का फोकस किसान-जीवन की समस्या पर रहा है जबकि रेणु का फोकस किसान-जीवन की समग्रता पर। लेखकद्वय किसान-जीवन की समग्रता को व्यक्त करते हैं। किसानों की समस्याओं संघर्ष, पीड़ा, तनाव, दबाव, कुंठा के साथ-साथ वह किसानों की संस्कृति, रीति-रिवाज लोक-जीवन को भी उतनी ही तत्परता, निपूर्णता व ईमानदारी तथा सशक्तता के साथ शब्द व स्वर प्रदान करते हैं।

विषय सूची

1. विषय प्रवेश 2. नागार्जुन तथा फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में किसान-जीवन का सामाजिक पक्ष 3. नागार्जुन तथा फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में किसान-जीवन का राजनीतिक पक्ष 4. नागार्जुन तथा फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में किसान-जीवन का आर्थिक पक्ष 5. नागार्जुन तथा फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में किसान-जीवन का सांस्कृतिक पक्ष। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

03. अमृत कुमार

आदिकाल और मध्यकाल संबंधी साहित्येतिहास-दृष्टि का अध्ययन (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र के विशेष संदर्भ में)

निर्देशक : प्रो. पूरनचंद दंडन

Th 24808

सारांश

(सत्यापित)

आदिकाल और मध्यकाल से संबंधित हिन्दी साहित्येतिहासकारों की इतिहास-दृष्टि में पर्याप्त विविधता दिखाई देती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की रसवादी और लोकवादी दृष्टि पूरे इतिहास लेखन में व्याप्त रही है और वह रस को केन्द्र में रखते हुए लोक की तरफ उन्मुख होते हैं। आदिकाल से रीतिकाल तक आचार्य शुक्ल की इतिहास-दृष्टि में रस और लोक का समन्वय है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की इतिहास-दृष्टि को किसी एक दृष्टि में बांधा नहीं जा सकता। उनकी इतिहास-दृष्टि मुख्य रूप से परंपरा, मानवता और प्रगतिशीलता के समन्वय से निर्मित है। प्रगतिशील आंदोलन से प्रभावित होने के कारण उनकी इतिहास-दृष्टि को मार्क्सवादी दृष्टि कह सकते हैं, परंतु पूर्ण रूप से उनकी दृष्टि मार्क्सवादी नहीं रही है। इसके अतिरिक्त उन्होंने जहाँ हिन्दी साहित्य के इतिहास को भारतीय साहित्य के इतिहास के रूप में कई स्थानों पर प्रस्तुत किया है वहीं उनकी इतिहास-दृष्टि ऐतिहासिक सांस्कृतिक चेतना से भी प्रभावित है। वह 'लोक' की व्याख्या आचार्य शुक्ल से अधिक व्यापक रूप में करते हैं और इसका कारण उनका मानवतावादी और प्रगतिशील चिंतन भी है। आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र की इतिहास-दृष्टि मुख्यतः शास्त्रवादी रही है, हालांकि कई स्थानों पर वह आचार्य रामचंद्र शुक्ल से भी प्रभावित दिखते हैं, परंतु उनके रसवादी चिंतन के कारण ही इनका शास्त्रवादी चिंतन परिष्कृत होता है और इसीलिए मिश्र जी अधिक प्रबल रूप से संतों, नाथों, की आलोचना करते हैं तो रीतिकाल की व्याख्या में भी शास्त्र के कारण वह अधिक रमे हैं। वस्तुतः आचार्य शुक्ल, आचार्य द्विवेदी, आचार्य मिश्र हिन्दी साहित्य के इतिहास की नींव रखते हुए उसे विकसित करते हैं। वे इतिहास लेखन के आधार हैं और इनकी इतिहास-दृष्टि वर्तमान और भविष्य में साहित्य और समाज को जहाँ एक नई दिशा देती है, वहीं इतिहास लेखन की नई संभावनाओं की संचित निधि भी है।

विषय सूची

1. साहित्येतिहास की अवधारणा और स्वरूप 2. हिन्दी साहित्येतिहास लेखन एवं साहित्येतिहासकार 3. आदिकाल संबंधी साहित्येतिहास दृष्टि 4. भक्तिकाल संबंधी साहित्येतिहास दृष्टि 5. रीतिकाल संबंधी संबंधी साहित्येतिहास दृष्टि 6. आदिकाल और मध्यकाल संबंधी साहित्येतिहास लेखन की भाषा शैली। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

04. अमित कुमार
प्रभाष जोशी के लेखन में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना।
निर्देशक : प्रो. कैलाश नारायण तिवारी
Th 24809

सारांश
(असत्यापित)

भारत विविधताओं वाला देश है। इसकी संस्कृति के विकास में विभिन्न संस्कृतियों का योग रहा है। रामधारी सिंह दिनकर ने इसे चार चरणों में विभक्त किया है- आर्य जब भारत आये, जैन और बौद्ध धर्म की स्थापना के समय, मुस्लिम जब भारत आये और अंग्रेज जब भारत आये। चारों चरणों में भारतीय संस्कृति का रूप सामासिक बनकर उभरा। प्रभाष जोशी भारत की इसी 'सामासिक संस्कृति' को स्वीकार करते हैं। वे हिन्दू धर्म के 'वसुधैव कुटम्बकम्' और सर्वे भवन्तु सुखिनः स्वरूप के पक्षधर हैं। प्रभाष जोशी मानते थे कि भारत का यह स्वरूप इसके एक राष्ट्र होने की प्राणवायु है। भारत पश्चिमी अवधारणाओं वाला राष्ट्र नहीं, न यह हिन्दू राष्ट्र है न मुस्लिम। यह ऐसा राष्ट्र है जिसमें सबको पचाने और आत्मसात करने की अद्भुत शक्ति है। यह यूरोप की तर्ज पर राष्ट्र नहीं बना है। इसकी राष्ट्रीयता इसकी सनातन और विराट संस्कृति में मौजूद है। रामधारी सिंह दिनकर मानते हैं कि भारत में राजनीतिक राष्ट्रवाद सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की कुक्षि से पैदा हुआ है। प्रभाष जोशी की भी ऐसी ही मान्यता है। वे भारत के लोकतांत्रिक संविधान का हवाला देते हुए मानते हैं कि भारत में प्रत्येक नागरिक के संवैधानिक एवं सामाजिक हितों की रक्षा की जानी चाहिए। वे जातीय व धार्मिक राजनीति को गलत ठहराते हैं। सम्प्रदायवाद तथा कट्टरवाद के खिलाफ लिखते हैं। वे हिन्दुत्ववाद अथवा मुस्लिमवाद को अनुचित मानते हैं। वे मानते हैं कि ये धार्मिक अथवा सांस्कृतिक कर्म न होकर राजनीतिक अपकर्म हैं, जिनसे भारत और इसके नागरिकों का कोई भला नहीं होने वाला है। इसलिए भारत को अपने इतिहास से सीख लेकर अपनी तरह का ऐसा राष्ट्र बनना चाहिए जिसमें 'अंतिम जन' तक के हित सुरक्षित हों। इस प्रकार प्रस्तुत शोध प्रभाष जोशी के लेखन में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना को समग्रता में समझने का विनम्र प्रयास है।

विषय सूची

1. प्रभाष जोशी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व 2. राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना 3. प्राभाष जोशी के लेखन में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना 4. प्रभाष जोशी का जीवन-दर्शन 5. सामाजिक-राजनीतिक आंदोलनों में सहभागिता, आरोप-प्रत्यारोप तथा मान-सम्मान। परिशिष्ट। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

05. अमिता

हिन्दी उपन्यासों में प्रेम संबंधों का तनाव (1980-2000)।

निर्देशिका : डॉ. वीणा अग्रवाल

Th 24810

सारांश

(असत्यापित)

सृष्टि का अस्तित्व ही स्त्री-पुरुष के प्रेम संबंधों पर निर्भर करता है। प्रेम अपने भीतर व्यापक अर्थ को सन्निहित किए हुए है। प्रेम एक ऐसी अनुभूति है, जो शब्दातीत है, अवण्य है जिसे मात्र महसूस किया जाता है। किन्तु वास्तविक यह है कि स्त्री-पुरुष के प्रेम संबंधों में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होने लगती है जिनके परिणामस्वरूप उनके प्रेम संबंधों में तनाव उत्पन्न होने लगता है। कई बार तनाव जनित परिस्थितियाँ स्त्री पुरुष के प्रेम संबंधों को सुदृढ़ करने में भी सहायक सिद्ध होती है। जिसके लिए आवश्यक है दोनों का एक दूसरे के प्रति ईमानदारी एवं सर्मपण का भाव। परंतु आधुनिक जीवन शैली में जीवन यापन करता प्रत्येक प्रेमी किसी न किसी प्रकार के तनाव से घिरा रहता है, भले ही उसके कारण अथवा स्वरूप भिन्न-भिन्न संदर्भों में भिन्नता लिए हुए हो। तनाव प्रत्येक प्रेम संबंध में देखा जा सकता हैं चाहे विवाहपूर्व प्रेमी-प्रेमिका संबंध हो, स्त्री अथवा पुरुष का एक तरफा प्रेम हो, स्त्री-स्त्री, पुरुष-पुरुष, सहजीवन प्रेमी युगल के प्रेम संबंध हो, अथवा वैवाहिक प्रेम संबंध, तनाव से अछूता कोई नहीं। विवाहेतर प्रेम संबंधों को तो समाज की स्वीकृति प्राप्त नहीं है अतः वे तनाव से मुक्त रह ही नहीं सकते। कहीं तनाव परिस्थितियों की उपज है तो कहीं हम स्वयं इसे आमंत्रित करते हैं। पाश्चात्य संस्कृति का आकर्षण, मूल्य में आए परिवर्तन यौन संबंधी कारण, महत्वाकांक्षाओं में आते उछाल आदि अनेक ऐसे कारण हैं जिनके चलते स्त्री-पुरुष तनाव को आमंत्रण देते हैं। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य सन् 1980-2000 तक की काल अवधि में रचित हिन्दी उपन्यासों में विवाहपूर्व, वैवाहिक एवं विवाहोपरांत (विवाहेतर) प्रेम संबंधों के तनाव के स्वरूप के विभिन्न आयामों के साथ-साथ स्त्री समलैंगिक पुरुष समलैंगिक तथा उभयलिंगी प्रेम संबंधी तनावों का विश्लेषण रहा है। प्रेम संबंधों में तनाव की उत्पत्ति के कारणों को खोजना भी शोध के उद्देश्य में समाहित है।

विषय सूची

1. प्रेम और तनाव : अर्थ एवं विचार सूत्र 2. आधुनिकता के संदर्भ में प्रेम संबंधों के बदलते आयाम 3. हिन्दी उपन्यास ओर प्रेम संबंधों का तनाव (1980 से पूर्व) 4. सन् 1980 से 2000 तक के हिन्दी उपन्यासों में विवाहपूर्व प्रेम संबंधों का तनाव 5. सन् 1980 से 2000 तक के हिन्दी उपन्यासों में विवाहोपरांत प्रेम संबंधों का तनाव। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

06. ओझा (प्रभांशु)
भारतेन्दु युगीन काशी का रंगमंच और हिंदी नवजागरण।
निर्देशक : प्रो. चंदन कुमार
Th 24811

सारांश
(असत्यापित)

शोध में मुख्य रूप से काशी की रंगमंच परंपरा के ऐतिहासिक विकासए स्वरूप और रंग. परिवेश तथा हिंदी नवजागरण के साथ उसके संबंध का मूल्यांकन किया गया है। आधुनिक दबावों के बावजूद भी काशी की रंगपरंपरा में ऐसे बहुत से सूत्र निहित रहे हैं जिनका अध्ययन कर आधुनिक हिंदी रंगमंच की विकास यात्रा के कुछ महत्वपूर्ण पड़ावों को चिन्हित किया जा सकता है।शोध काशी की रंगपरंपरा को केंद्र में रखते हुए आधुनि हिंदी रंगमंच की विकास यात्अवलोकन करने का प्रयास करता है। शोध का निष्कर्ष है कि भारत में 19वीं शती में तत्कालीन सामाजिक. आर्थिक राजनीतिक परिस्थितियों के चलते काशी में भारतेंदु हरिश्चंद्र के नेतृत्व में हिंदी रंगमंच केपरिष्कार और उसे सुरुचिपूर्ण बनाने की जो प्रक्रिया आरम्भ हुईए उसे सिर्फ आधुनिकता के अनुकरण का परिणाम नहीं माना जा सकता भारतेंदु के बाद इस रंगकर्म की पृष्ठभूमि सामान्यतः मध्यवर्गीय हो गईए लेकिन भारतेंदुयु गीन काशी का रंगमंच अपनी प्रेरणा लगातार लोक और परंपरा के तत्वों से भी प्राप्त कर रहा था और उसमें यथासंभव आधुनिक तत्वों का समावेश भी कर रहा था । परिष्कार के बावजूदए भारतेंदुयुगीन काशी का रंगमंच अपनी परंपरा का संधान करते हुए आधुनिकता का मार्ग प्रशस्त कर रहा था । आवश्यकता है कि काशी के रंगपरिवेश में दीर्घकाल तक कायमरही आत्मप्रशिक्षण की परंपरा को कैसे जीवित किया जाए तथा काशी में अब भी सक्रिय रामनगर की रामलीला की रंगपरंपरा और आधुनिक रंगपरंप रा के बीच संवाद स्थापित किया जाए।

विषय सूची

1. भारतीय रंगमंच की परंपरा और विकास 2. भारतेंदु युगीन रंगमंच 3. हिंदी नवजागरण और भारतंदु युगीन काशी का रंगमंच 4. भारतेंदु युगीन काशी का रंगमंच और वर्तमान काशी का रंगमंच उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

07. कुमार गौरव
हिंदी कहानियों में विचारधारा की भूमिका (नई कहानी से अकहानी तक)।
निर्देशक : डॉ. अल्पना मिश्र
Th 24812

विषय सूची

1. साहित्य और विचारधारा का अंतःसंबंध 2. हिन्दी कहानी और विचारधारा 3. नई कहानी में विचारधाराओं की उपस्थिति 4. अकहानी और विचारधाराओं के अंतर्विरोध 5. उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

08. कौशलेन्द्र कुमार
हिन्दी की रामकाव्य परम्परा में बदलती स्त्री छवि।
निर्देशक : प्रो. कैलाश नारायण तिवारी
Th 24813

सारांश
(असत्यापित)

भारत में रामकाव्य की परम्परा हजारों वर्षों से चली आ रही है। एक पीढ़ी जिस रूप में रामकाव्य को पढ़ती है वह उसी रूप में अगली पीढ़ी को नहीं देती बल्कि इसमें कुछ जोड़ती है, कुछ बदलाव करती है। अतः रामकाव्य परम्परा में समय-दर-समय बदलाव आता गया है। यह बदलाव किस रूप में, किस स्तर तक हुआ है, उसे प्रस्तुत शोध प्रबंध में तार्किक एवं ठोस प्रमाणों के साथ दिखलाया गया है। प्रस्तुत शोध प्रबंध में यह भी समझने का प्रयास किया गया है कि यह बदलाव अकारण ही है या फिर यह बदलते परिवेश, समय-बोध की भी तसदीक करता है? इस दृष्टि से विचार करने पर रामकाव्य परम्परा को समझने, विशेषकर स्त्री पात्रों की दृष्टि से, निश्चय ही एक नवीन वैचारिकी का साक्षात्कार हुआ है। किसी समाज के विकास क्रम को समझने के लिए, समाज के आधे सच को समझना नितांत आवश्यक है। यह आधा सच नारी की स्थिति को वास्तविक रूप से दर्शाता है। 'हिंदी की रामकाव्य परम्परा में बदलती स्त्री छवि' विषय पर शोध करते हुए यह देखा गया कि अलग-अलग कालखण्डों में लिखे गए रामकाव्यों में स्त्री की छवियाँ बहुआयामी है। कभी किसी रचना में सीता प्रमुखता पाती है तो किसी में उर्मिला। कभी किसी रचना में मंदोदरी का वह स्वरूप उभरता है जिसमें

अब तक दुनिया अनजान थी। एक दौर ऐसा भी आता है जब स्त्री की छवि से ज्यादा अहिंसात्मक विचारधारा महत्वपूर्ण हो जाती है तो कभी स्त्री की मुक्ति राष्ट्र की मुक्ति के साथ-साथ बहुजन, आमजन की मुक्ति से भी जुड़ जाती है। शबरी जैसी जंगलों में रहने वाली महिलाएँ भी रामकाव्य परम्परा में स्थान पाती है। अतः विमर्शों की दिशा जैसे-जैसे बदलती जाएगी, रामकाव्य में चित्रित स्त्री छवियों को पुनः व्याख्यायित किया जाता रहेगा और सच पूछा जाय तो रामकाव्य जैसे अमर काव्य की अमरता भी इसी में है।

विषय सूची

1. रामचरितमानस से पूर्व की रामकाव्यों में नारी का स्वरूप 2. रामचरितमानस में स्त्री की छवि 3. रामचन्द्रिका में स्त्री छवि 4. आधुनिक काल की रामकाव्यों में नारी का स्वरूप 5. रामचरितमानस के पूर्ववर्ती तथा परवर्ती रामकाव्य परम्परा में नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

09. गीता रानी

हिन्दी दलित कहानियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन (1980 से अब तक)

निर्देशिका : डॉ. रजत रानी आर्य

Th 24814

सारांश

(असत्यापित)

भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार की असमानताएँ मौजूद हैं। यह कहीं जातियों/उपजातियों में बंटा हुआ है तो कहीं धर्म और मज़हबों में। स्त्री-पुरुष का लैंगिक भेदभाव भी भारतीय समाज में मौजूद है। इसी से भारतीय समाज पुरुष प्रधान अथवा पितृसत्तात्मक समाज है। जातीय विषमताओं के चलते यह सवर्ण और अवर्ण में विभक्त है। सवर्ण स्वयं को सर्वोपरि मानते हैं तथा निचले तबके के दलित अथवा शोषितों से वे हर प्रकार का भेदभाव करते हैं। जिसके चलते भारतीय समाज का सवर्तोन्मुखी विकास नहीं हो पाता है तथा उच्च वर्ण के लोगों का हर क्षेत्र में वर्चस्व रहता है। इसी से उच्च तथा निम्न वर्ण के मध्य न सिर्फ राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक तथा धार्मिक दूरियाँ रहती हैं बल्कि दोनों की स्थितियों में धरती आसमान का भेद रहता है। हिन्दी दलित कहानियों में जो प्रमुख तथा गौण अथवा दलित अथवा ग़ैर दलित पात्र उभरकर सामने आए हैं उनमें न सिर्फ जातीय तथा धार्मिक विषमताएँ देखी जा सकती हैं अपितु दलित तथा गैर दलित के संदर्भ में हर प्रकार की विषमताओं एवं त्रासदी को भी स्पष्ट देखा जा सकता है। दलित स्त्री लेखिकाओं की कहानियों में भारतीय नारी की सामाजिक तथा लैंगिक त्रासदियों को उभारा गया है। जिनमें दलित स्त्री, गैर दलित स्त्री की अपेक्षा अधिक शोषित होती है। हिन्दी दलित कहानियों में दलित स्त्री-

पुरुष के भेद को भी स्पष्ट समझा जा सकता है। प्रस्तुत शोध में उक्त तथ्यों को भली भाँति समझने का प्रयास हुआ है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध- 'हिन्दी दलित कहानियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन (1980 से अब तक)' भावी शोधार्थियों अथवा अध्येताओं को उक्त संदर्भ में महत्त्वपूर्ण तथ्य उपलब्ध करायेगा।

विषय सूची

1. समाज, समाजशस्त्र और साहित्य का समाजशास्त्र 2. हिन्दी दलित कहानी की विकास यात्रा 3. हिन्दी दलित कहानियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन 4. हिन्दी दलित कहानियों का समाज 5. हिन्दी दलित कहानियों का शिल्प-सौन्दर्य। परिशिष्ट। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

10. गुप्ता (नीति)
तुलसीदास के काव्य में हाशिए का समाज।
निर्देशिका : डॉ. ममता सिंगला
Th 24815

सारांश
(सत्यापित)

'हाशिए का समाज' एक समाजशास्त्रीय अवधारणा है जिसका शाब्दिक अर्थ है- ऐसे लोग जो समाज से वंचित हैं। इसके अन्तर्गत स्त्री, आदिवासी, दलित, अश्वेत, निर्धन आदि आते हैं। हिन्दी भक्तिकालीन कवि तुलसीदास के काव्य में 'हाशिए के समाज' के पात्र एवं परिवेश उपस्थित है। इसी तथ्य को लक्ष्य करके मैंने प्रस्तुत शोध प्रबंध में "तुलसीदास के काव्य में 'हाशिए का समाज'" का अध्ययन किया है, जो छः अध्यायों में विभाजित है। प्रथम अध्याय 'हाशिए का समाज: अवधारणा एवं स्वरूप' है। इसके अन्तर्गत समाज का अर्थ, परिभाषा एवं उसकी अनिवार्यता; 'हाशिए का समाज' का अर्थ, स्वरूप, उसकी उत्पत्ति के कारकों और हाशिए के समाज-संबंधी पाश्चात्य एवं भारतीय दृष्टिकोणों का अध्ययन किया है। द्वितीय अध्याय 'भारतीय समाज और राजनीति में उपेक्षित और वंचितों का उदय' है। इसके अन्तर्गत मैंने विविध वंचित वर्गों का भारतीय समाज, राजनीति और धर्म के परिप्रेक्ष्यों में अध्ययन किया है। तृतीय अध्याय 'हाशिए का समाज एवं आधुनिक भारतीय विचारकों का अंतः संबंध' है। इसके अन्तर्गत हाशिए के समाज के साथ आधुनिक भारतीय विचारधाराऐं यथा - माक्र्सवाद, गांधीवाद एवं अम्बेडकरवाद आदि के अन्तः सम्बन्धों का अध्ययन किया है। चतुर्थ अध्याय 'तुलसीदास का सामाजिक चिंतन और तुलसीकालीन समाज का यथार्थ एवं अन्तर्विरोध' है। इसके अन्तर्गत 'मध्यकालीन समाज एवं तुलसीदास' तथा 'तुलसीदास का सामाजिक चिंतन एवं तत्कालीन सामाजिक यथार्थ के विविध आयामों' का अध्ययन किया है। पाँचवां अध्याय 'तुलसीदास के काव्य में हाशिए का समाज' है। इसके अन्तर्गत

तुलसीदास के काव्य विशेषकर 'रामचरितमानस' के विविध-स्थलों पर वर्णित हाशिए के समाजों का अध्ययन किया है। छठा अध्याय 'तुलसीदास के काव्य में हाशिए का समाजः विविध दृष्टियाँ' है। इसके अन्तर्गत विभिन्न वर्गों- साहित्यिक - सांस्कृतिक वर्ग, राजनीतिक वर्ग, शिक्षक वर्ग एवं शोधार्थी वर्ग के विशिष्ट व्यक्तियों से व्यक्तिगत प्रश्नोत्तरी, साक्षात्कार के माध्यम से तुलसीदास के काव्य में हाशिए के समाज संबंधी विविध दृष्टियों का अध्ययन किया है।

विषय सूची

1. हाशिए का समाजः अवधारणा और स्वरूप 2. भारतीय समाज और राजनीति में उपेक्षित और वंचितों का उदय 3. हाशिए का समाज एवं आधुनिक भारतीय विचारधाराओं का अंतःसंबंध 4. तुलसीदास का सामाजिक चिंतन और तत्कालीन समाज का यथार्थ एवं अंतर्विरोध 5. तुलसीदास के काव्य में हाशिए का समाज 6. तुलसीदास के काव्य में हाशिए का समाज संबंधी विविध-दृष्टियाँ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

11. गप्ता (मनोज कुमार)
स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी बाल-पत्रिकाओं में बाल-जीवन (पराग के विशेष संदर्भ में)
निर्देशक : डॉ. अनिल शर्मा
Th 24816

सारांश
(असत्यापित)

इस शोध प्रबंध में, बाल जीवन के विकास में बाल पत्रिकाओं के योगदान को स्पष्ट तौर पर रेखांकित किया गया है जिसमें 'पराग' विशेष संदर्भ के रूप में है । बाल पत्रिकाएँ बच्चों तक नियमित रूप से बाल साहित्य को पहुंचाने का प्रमुख ज़रिया हैं । बाल पत्रिकाएँ बच्चों में रचनात्मकता और संवेदनशीलता का विकास करती हैं । बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण, सामाजिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक चेतना, ज्ञान-विज्ञान, कला और साहित्यिक अभिरुचि के विकास में बाल पत्रिकाएँ अहम भूमिका अदा करती हैं । इस शोध प्रबंध में बाल जीवन के इन विविध आयामों के आधार पर 'पराग' का विश्लेषण किया गया है । जहाँ तक 'पराग' की भाषा का सवाल है तो वह सहज और सरल रही है । 'पराग' ने भाषा के प्रति कभी शुद्धतावादी रवैया नहीं अपनाया । उसकी शब्दावली विविधतापूर्ण है । अगर साज-सज्जा की बात करें तो इस मामले में भी यह एक बेहतर पत्रिका साबित हुई । आज की तरह विकसित तकनीक के न होने के बावजूद 'पराग' ने अपनी साज-सज्जा का विशेष ख़्याल रखा, जो इसमें इस्तेमाल किए गए चित्र, रंग, साइज और फॉन्ट हर स्तर पर नज़र आता है । इस पत्रिका के साज-सज्जा की कुछ सीमाएँ भी थी, मसलन- मुखपृष्ठ पर प्रकाशित होने वाले

बच्चों की तस्वीरों में विविधता का न होना, छोटी लड़कियों को दुल्हन के लिबास में दिखाना, बाद के दिनों में पत्रिका के साइज और फॉन्ट को छोटा करना आदि । जहाँ तक विज्ञापन की बात है तो 'पराग' के कई विज्ञापन खुद 'पराग' के विचारों के खिलाफ नज़र आते हैं । उनमें चाहे बंदूक के खिलौने का विज्ञापन हो या फिर कद बढ़ाने का । अगर 'पराग' के प्रसार की बात करें तो इस मामले में वह बेहतर नज़र आता है ।

विषय सूची

1. बाल जीवन और बाल पत्रिकाएँ 2. हिन्दी में बाल पत्रिकाओं का विकास 3. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी बाल पत्रिकाएँ 4. पराग : संपादक, संपादकीय दृष्टि एवं प्रकाशित सामग्री 5. पराग : बाल जीवन के विविध आयाम 6. पराग : भाषा, साज-सज्जा, विज्ञापन और प्रसार। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

12. गुप्ता (रीतु)
हिन्दी नाटक और रंगमंच की आधुनिकताएँ।
निर्देशिका : डॉ. हर्षबाला शर्मा
Th 24817

सारांश
(असत्यापित)

प्रस्तुत शोध विषय हिंदी नाटक और रंगमंच की आधुनिकताएँ के अंतर्गत हिंदी नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में व्यापक रूपों में होने वाले आधुनिक प्रयोगों को देखने का प्रयास किया गया है। मूल रूप से यह विषय हिंदी नाटक और रंगमंच के संदर्भ में सैद्धांतिक व व्यावहारिक प्रयोगों से संबंधित है। हिंदी-रंगमंच नाटक का जो रूप, स्वरूप, विधान आज हमारे सामने हैं, वह समय-समय पर हुए परिवर्तन और प्रयोगधर्मिता का परिणाम है। नाटक-रंगमंच ने आधुनिकता के कई नए धरातलों को छुआ है। नाटक अपनी बहुआयामीयता के साथ मंच पर प्रस्तुति के माध्यम से जिन नई विचारधाराओं, रूपों, दृष्टियों, प्रयोगों को जन्म दे रहा है उन्हें सम्मिलित रूप से 'आधुनिकताएँ' शब्द के अन्तर्गत ही समेटा जा सकता है। चूँकि प्रस्तुत विषय हिंदी नाटक और रंगमंच से संबंधित आधुनिकताओं पर आधारित है इसलिए नाटक और रंगमंच के क्षेत्रों में होने वाले आधुनिक प्रयोगों को विभिन्न प्रस्तुतियों और व्यक्ति साक्षात्कारों के संदर्भ में देखने का भी प्रयास किया गया है। इस प्रकार हिंदी नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में निरंतर चलने वाली नाट्य-रंग प्रक्रिया को सामने लाना, प्रयोगों के माध्यम से नवीन मानदण्डों की स्थापना, पुनः प्रस्तुति के द्वारा नई आधुनिकताओं की स्थापना को व्यक्त करने का प्रयास करना, नाटककार, निर्देशक, अभिनेताओं के मध्य बनते नवीन संबंधों को स्थापित करना, दर्शक के रूप में नाटक और प्रस्तुति के संदर्भ में नयी

आधुनिकताओं के स्वीकार-अस्वीकार की स्थिति को विश्लेषित करना ही इस शोध प्रबन्ध का उद्देश्य है।

विषय सूची

1. हिंदी नाटक और रंगमंच : आधुनिकताएँ 2. हिंदी नाटक परंपरा और प्रयोग 3. हिंदी रंगमंच परंपरा और प्रयोग 4. प्रदर्शनशैली प्रस्तुति व्यापार की नवीनता 5. रंगकर्म : प्रयोग एवं परीक्षण (साक्षातकार द्वारा प्राप्त मान्यताओं एवं निष्कर्षों पर आधारित)। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

13. गुप्ता (विक्रम)
हिंदी शब्दकोश परंपरा का विश्लेषण।
निर्देशक : डॉ. महेश कुमार
Th 24818

सारांश
(असत्यापित)

शोध-विषय 'हिंदी शब्दकोश परंपरा का विश्लेषण' के अंतर्गत हिंदी के प्रथम कोश 'खालिकबारी' से लेकर 'राजकमल बृहत् हिंदी शब्दकोश'(2017) तक के अंतर्गत एकभाषिक, द्विभाषिक और बहुभाषिक के लगभग सौ प्रमुख कोशों का विवेचन-विश्लेषण किया गया है| इन प्रनुख कोशों के अध्ययन के दौरान कुछ कोशों में समानताएँ हैं तो कुछ असमानताएँ भी हैं| इसके बावजूद संपूर्ण कोश परंपरा को आदि काल (1000ई. – 1500ई.) मध्य काल (1500ई. – 1828ई.) और आधुनिक काल (1829ई. – अब तक) के रूप में विभाजित किया गया है| आधुनिक काल के अंतर्गत दो धाराएँ हैं- पहली धारा 'प्रथम उत्थान' (1829ई.-1948ई.) है| इसमें पादरी आदम के 'हिंदी कोश' से लेकर देवनागरी उर्दू-हिंदी कोश तक के प्रमुख कोशों का विवेचन है| दूसरी धारा 'द्वितीय उत्थान' (1949ई.-अब तक) है| इसके अंतर्गत रामचंद्र वर्मा के 'प्रामाणिक हिंदी कोश' से लेकर पुष्पपाल सिंह के 'राजकमल बृहत् हिंदी शब्दकोश' तक के प्रमुख कोशों का विश्लेषण है| हिंदी कोश-निर्माण के अंतर्गत आवश्यक घटकों की चर्चा करते हुए सामग्री-संकलन एवं शब्द-संकलन, शब्द-क्रम, वर्तनी, उच्चारण, शब्द-स्रोत, शब्द-व्युत्पत्ति, व्याकरणिक कोटियाँ, अर्थ, उद्धरण/उदाहरण, चित्र और संकेत-चिह्न के आधार हिंदी शब्दकोशों का विधिवत विवेचन-विश्लेषण किया गया है| हिंदी शब्द-निर्माण के अंतर्गत व्युत्पत्ति पद्धति (मूल शब्द/धातु, उपसर्ग, प्रत्यय), समास पद्धति (अव्ययी भाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, द्वद्व, बहुव्रीहि), गृहीत पद्धति (आगत, संकर, अनूदित), वर्ण-विपर्यय पद्धति (वर्ण का आगम, वर्ण विपर्यय, वर्ण विकार, वर्ण लोप), अर्थ परिवर्तन पद्धति (अर्थ-विस्तार, अर्थ-संकोच, अर्थादेश/अर्थ क्षेत्र), छिन्न शब्द (आरंभ के अक्षरों से, मध्य के अक्षरों से और अंत के अक्षरों से), संक्षिप्त शब्द तथा

मिश्र शब्द के आधार पर हिंदी शब्दकोशों से शब्दों का उदाहरण देते हुए विवेचन-विश्लेषण किया गया है|

विषय सूची

1. शब्दकोश की अवधारणा : स्वरूप एवं प्रकार 2. हिंदी शब्दकोशों की निर्माण-प्रक्रिया एवं शब्द-निर्माण 3. एंतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शब्दकोश लेखन परंपरा का विश्लेषण 4. हिंदी कोश-निर्माण : विश्लेषणात्मक अध्ययन 5. हिंदी शब्दकोंशों में प्रयुक्त शब्दों की निर्माण-प्रक्रिया : विश्लेषणत्मक अध्ययन। उपसंहार। ग्रंथ सूची।

14. गौड़ (दीप्ति)
प्रगतिशील काव्यधारा और त्रिलोचन का काव्य-संसार।
निर्देशक : डॉ. विनय विश्वास
Th 24819

सारांश
(असत्यापित)

साहित्य और समाज एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। मानव जीवन की अनुभूतियाँ ही साहित्य में साकार होती हैं। किसी विशिष्ट दिशा में आगे बढ़ने में ही जीवन की सार्थकता है। प्रगतिशील कविता मनुष्य को उत्थान की ओर अग्रसर करने का प्रयास करती है। शोषित, दीन-दलित, पिछड़ा वर्ग इनकी कविताओं का मुख्य विषय है। प्रगतिवाद मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित रहा जिसके मूल में 1917 की रूसी क्रांति रही। प्रगतिशील काव्यधारा समाजवादी मूल्यों की साहित्यिक अभिव्यक्ति है। त्रिलोचन प्रगतिशील कवियों की श्रेणी में आते हैं। उनका काव्य प्रगतिशील कविता की विशेषताओं से पूर्ण है। कुरीतियों का चित्रण हो, प्रकृति प्रेम, स्त्री के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण तथा ग्रामीण परिवेश का बहुत सरल शब्दों में चित्रण ये सब त्रिलोचन के काव्य में यथास्थान देखने को मिलते हैं। त्रिलोचन के गीतों में मधुरता और लोक-संस्कृति के प्रति उनका लगाव देखने को मिलता है। आर्थिक तंगी से जूझकर लोग रोजगार की तलाश के लिए शहर की ओर जा रहे हैं किन्तु जीवन का मशीनीकरण हो जाता है। त्रिलोचन ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए बोलचाल की सरल भाषा का प्रयोग किया है। उनकी भाषा में सादापन है लेकिन पैनापन और धार भी है। त्रिलोचन की भाषा में एक समाज दिखाई देता है। त्रिलोचन के काव्य में विभिन्न काव्य रूप देखने को मिलते हैं। उन्होंने छंदों का प्रयोग भी किया है। रोला उनका प्रिय छंद दिखाई पड़ता है। त्रिलोचन ने गजल, रुबाइयाँ, सॉनेट, त्रिपदियाँ आदि शैली में काव्य रचना की है। त्रिलोचन और प्रगतिशील काव्यधारा दोनों में समानता मिलती है। प्रगतिशील काव्य अपने सर्वोत्तम रूप में त्रिलोचन की कविताओं में दिखता है। प्रगतिशील कवियों के समान त्रिलोचन भी संघर्ष में विश्वास रखते हैं। अगर

व्यक्ति मुक्ति चाहता है तो मुक्ति के लिए संघर्ष उसे स्वयं ही करना पड़ेगा। वर्गविहीन समाज की स्थापना का संदेश ही इनका मुख्य लक्ष्य रहा।

विषय सूची

1. प्रगतिशील काव्यधारा : पृष्ठभूमि और उदय 2. प्रगतिशील काव्यधारा की विशेषताएँ 3. त्रिलोचन का काव्यः अन्तर्वस्तु 4. त्रिलोचन का काव्य : भाषा और शिल्प 5. प्रगतिशील काव्यधारा और त्रिलोचन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

15. चीमा (पूजा)
सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के साहित्य में राजनीतिक चेतना।
निर्देशक : डॉ. बिक्रम सिंह
Th 24820

सारांश
(असत्यापित)

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का आधुनिक हिंदी साहित्यकारों में एक विशिष्ट स्थान है। हिन्दी साहित्य में नई कविता आन्दोलन के एक सशक्त हस्ताक्षर के रूप में उन्होंने अपनी पहचान बनाई । इसके अतिरिक्त नाटककार, कथाकार, अनुवादक व पत्रकार के रूप में उन्होंने जो कार्य किया, वह सराहनीय है। सर्वेश्वर ने अपनी रचनाओं द्वारा जीवन के विविध पक्षों को कुशलता से अभिव्यंजित किया है। सर्वेश्वर जो स्वयं एक निम्न-मध्यम परिवार से संबंध रखते थे, उन्होंने जीवन जगत के यथार्थ को न सिर्फ नज़दीक से देखा अपितु स्वयं भी उसे भोगा। सर्वेश्वर ने अपने साहित्य के माध्यम से अपने समय की राजनीतिक व सामाजिक विसंगतियों पर प्रकाश डाला। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उपजी मोहभंग की स्थिति, पंचवर्षीय योजनाओं की विफलता, अर्थव्यवस्था की धीमी विकास दर, जातिगत एवं धर्मगत भेदभाव, जनसंख्या विस्फोट एवं प्रशासनिक अव्यवस्था, नैतिक ह्रास, शिक्षा का व्यावसायीकरण, भूख, गरीबी, बेरोजगारी आदि समस्याओं को उन्होंने अपने साहित्य में स्थान दिया। तथा इन सभी समस्याओं के पीछे वे राजनीतिक व्यवस्था को ही दोषी ठहराते हैं। विवेच्य साहित्यकार का कहना है कि हमारे देश में लोकतंत्र की स्थापना हुई है परंतु, लोकतंत्र का अर्थ जनता का जनता द्वारा जनता के लिए शासन नहीं है अपितु नेता का नेता द्वारा नेता के लिए अधिक दृष्टिगत होता है क्योंकि आमजन की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं है। वस्तुतः सर्वेश्वर का संपूर्ण साहित्य उनकी राजनीतिक सजगता को दर्शाता है। उन्होंने राजनीतिक यथार्थ को सूक्ष्मता से देखते हुए उसे सही मायने में पकड़ अपने साहित्य में स्थान भी दिया। सर्वेश्वर अपने साहित्य में समस्याओं को न सिर्फ प्रस्तुत करते हैं अपितु उनका समाधान भी करते हैं। उनका यह समाधान कहीं लोहिया के फेबियन समाजवाद के

अधिक समीप जान पड़ता है तो कहीं मार्क्स की मार्क्सवादी विचारधारा के। इसका कारण यह है कि वे मानव कल्याण को केन्द्र में रखते हैं।

विषय सूची

1. समाज और साहित्य के संदर्भ में चेतना की भूमिका 2. राजनीतिक चेतना और हिन्दी साहित्य 3. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का काव्य बोध और राजनीतिक अन्तर्वस्तु 4. सर्वेश्वर का गद्य साहित्य : राजनीतिक चेतना का विस्तार और जीवन दृष्टि 5. सर्वेश्वर की राजनीतिक अन्तर्दृष्टि : भाषा और शिल्पगत प्रयोगों के आयाम। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

16. चौधरी (कल्पना)
आधुनिक हिंदी कविता का स्त्रीवादी पाठ (1990-2010)।
निर्देशक : डॉ. संजय कुमार
Th 24821

सारांश
(सत्यापित)

यह शोध प्रबंध 1990 से 2010 तक की कविताओं में स्त्री एवं पुरुष दोनों रचनाकारों द्वारा स्त्री दृष्टि से कविता का सम्यक् आकलन है।आलोच्य दो दशको में स्त्रियों की समकालीन परिस्थितियों को रेखांकित किया गया है।समकालीन स्त्री साहित्य का भाषायी परिदृश्य स्त्री एवं पुरुष के मध्य संबंधों एवं स्वयं स्त्री की नयी छवि का अवलोकन करता है।स्त्री की स्वानुभुति ही स्त्रीवादी -पाठ का केन्द्र है,जिसमें स्त्री के अनेक आयामों को प्रमुखता से देखा गया है।स्त्री के मातृ,पत्नी,बहन,सभी रुपों को हिंदी कविता के माध्यम से उजागर किया गया है।इसमें स्त्री के अस्तित्व पर उठने वाले सवालों का अहसास है ।इस दौर की कविताओं में स्त्री-प्रश्न को भाषा , धर्म ,जाति एवं लिंग संबंधी भेदभाव से जोड़कर देखा गया है और इनकी जड़ों को पहचान कर उन पर प्रहार किया गया है।इसके साथ स्त्री के सबसे अहम् स्वरुप "माँ" के कष्टकारी जीवनयापन को देखते हुए उसके संघर्षों को अभिव्यक्ति दी गयी है ।स्त्री साहित्य में स्त्री की पीड़ा की लकीरें और उसके साथ दलित स्त्री का अपना एक वर्ग है,जो उसे समस्त स्त्री समाज में अशक्त बनाता है ।दलित साहित्य का मुख्य मुद्दा जातिगत असमानता के दंश के प्रतिकार का था,जो समकालीनता में स्त्री चेतना को स्वर देता है ।भारतीय समाज परंपरा से जेंडर संबंधी भेद-भाव पर आधारित रहा है ,जिसके कारण स्त्री को सर्वदा दोयम दर्जे का माना जाता रहा है।आलोच्य दो दशक(1990-2010)में हिंदी कविताओं ने इस स्थिति को विस्तृत रूप में पाठकों के सामने रखा ।इस प्रस्तुतिकरण के दौरान कभी कटु एवं कभी मधुर स्वर उभरे,जो स्त्री की विभिन्न परिस्तिथियों के परिचायक

हैं।यह सच्चाई स्त्री जीवन की सार्थकता का प्रमाण है। इस दौर की कविता में स्त्री-अस्मिता को सटीक बिम्बों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

विषय सूची

1. स्त्रीवाद : अवधारणा और स्वरूप 2. आधुनिक हिंदी कविता में स्त्री 3. परिवार और स्त्री : 1990 से 2010 तक की कविता में 4. सामाजिक, आर्थिक संरचना और स्त्री : 1990 से 2010 तक की कविता में 5. प्रेम और स्त्री : 1990 से 2010 तक की कविता में 6. स्त्री-भाषा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

17. दिनेश कुमार

हिन्दी में आधुनिकतावाद का प्रवेश ओर प्रगतिशील आलोचना की वैचारिकी : प्रतिमानों की टकराहट (रामविलास शर्मा, गजानन माधव मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह और नामवर सिंह के विशेष संदर्भ में)।

निर्देशक : डॉ. संजीव कुमार

Th 24822

सारांश

(असत्यापित)

आधुनिकतावाद साहित्यिक अध्ययनों का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। साहित्य और संस्कृति के साथ आधुनिकतावाद का सम्बन्ध बहुत ही दुविधापूर्ण रहा है। शायद यही वजह रही कि यह दुनियाभर के आधुनिकता के अध्येताओं को अपनी ओर खींचता रहा है। छात्रों और आलोचकों ने हमेशा आधुनिकतावाद को लेकर एक संतुलित विचार प्रस्तुत करने की कोशिशें की हैं लेकिन उनके समक्ष इसे एक ऐतिहासिक वर्ग में रखकर देखने सम्बन्धी असहमतियां एक चुनौती के रूप में विद्यमान रही हैं। विद्वानों के बीच आधुनिकतावाद की वैचारिकी को लेकर असहमतियों से उपजी चुनौतियां हिंदी में भी मौजूद हैं। हिंदी में एक तरफ आधुनिकतावाद के अंतर्गत कलावाद के समर्थक हैं तो दूसरी ओर प्रगतिशील आलोचना जिसने हिंदी में कलावाद को स्थापित करने की कोशिशों का पुरजोर विरोध किया। साथ ही एक दिलचस्प बात यह भी जुड़ी हुई है कि प्रगतिशील आलोचकों के मध्य भी आधुनिकतावाद की वैचारिकी को लेकर असहमतियां देखने को मिलती हैं। शोध-प्रबंध में पहले तो आधुनिकतावाद के अंतर्गत कलावादी विचारकों और उनसे असहमतियां रखने वाले प्रगतिशील आलोचकों के विचारों को विस्तार से दिखाया गया है। उसके बाद स्वयं प्रगतिशील आलोचकों के बीच आधुनिकतावाद की वैचारिकी को लेकर जो असहमतियाँ हैं उनको भी विस्तार से दिखाते हुए उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन व विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस सम्बन्ध में हिंदी में आधुनिकतावाद के प्रवेश अर्थात् तारसप्तक के प्रकाशन से लेकर नई कविता के दौर में हुई बहसों का विवेचन और विश्लेषण तो किया ही गया है साथ ही प्रगतिशील आलोचना में

परम्परा, रचना-प्रक्रिया व रूप सम्बन्धी जो आलोचनात्मक समस्याएं हैं इस सम्बन्ध में उनके विचारों को भी समझने की कोशिश की गई है।

विषय सूची

1. आधुनिकतावाद व हिंदी की प्रगतिशील आलोचना 2. हिंदी में प्रगतिशील आलोचना और आधुनिकतावाद का वैचारिक द्वंद्व 3. रामविलास शर्मा और आधुनिकतावाद 4. मुक्तिबोध और आधुनिकतावाद 5. शमशेर और आधुनिकतावाद 6. नामवर सिंह और आधुनिकतावाद। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

18. निर्भय कुमार
हिंदी कथा-साहित्य में सेक्सुअलिटी की अवधारणा (1990 के बाद)
निर्देशक : प्रो. अपूर्वानंद
Th 24823

सारांश
(असत्यापित)

प्रस्तुत शोध-प्रबंध पाँच अध्यायों में वर्गीकृत है। पहला अध्याय 'सेक्सुअलिटी की अवधारणा: विविध संदर्भ' है जिसके तीन उप-अध्यायों में सेक्सुअलिटी के अर्थ और विस्तार, सेक्स-जेंडर व सेक्सुअलिटी के अंतर्संबंधों व सेक्स-जेंडर-सेक्सुअलिटी आधारित विविध 'पहचानों' पर विचार करते हुए सेक्सुअलिटी के विविध आयामों की परख करने का उपक्रम किया गया है। दूसरा अध्याय 'सामाजिक संरचना का संदर्भ : जेंडर और सेक्सुअलिटी के प्रश्न' है जिसके दो उप-अध्यायों में मातृसत्तात्मक व पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था के भीतर स्त्री-पुरुष के यौन संबंधों के स्वरूप, उनके जेंडर और सेक्सुअलिटी के संदर्भों, जेंडर व सेक्सुअलिटी जनित समस्याओं और इन सबके आधार पर दोनों की सामाजिक-आर्थिक हैसियत को समझने की कोशिश की गई है। तीसरा अध्याय 'विविध सामाजिक संस्थाएँ : जेंडर और सेक्सुअलिटी के प्रश्न' है जिसके दो उप-अध्यायों में 'परिवार' व 'विवाह' नामक संस्था की संरचना, उनकी कार्य-प्रणाली, समाजीकरण की प्रक्रियाओं के अनुपालन में उनकी भूमिका, इनके भीतर सेक्स व जेंडर के आधार पर स्त्री-पुरुष के बीच मौजूद विषमता, पुरुष वर्चस्व और स्त्रियों की अधीनता में उनके जेंडर और सेक्सुअलिटी की भूमिकाओं, साथ ही 'परिवार' व 'विवाह' नामक संस्था के टूटने के कारणों को समझने का प्रयास है। चौथा अध्याय '90' के बाद हिंदी उपन्यासों में सेक्सुअलिटी की अवधारणा' है जो कि 'पहला मुख्य अध्याय' है। इसके चार उप-अध्यायों में कुछ महत्त्वपूर्ण उपन्यासों के आधार पर समाज में सेक्सुअलिटी के लौकिक आख्यानों, सेक्सुअलिटी के विविध स्वरूपों और जेंडर व सेक्सुअलिटी आधारित हाशियाकृत समाज की समस्याओं पर विचार किया गया है। पाँचवा

अध्याय '90' के बाद हिंदी कहानियों में सेक्सुअलिटी की अवधारणा' है जो कि 'दूसरा मुख्य अध्याय' भी है। इसके तीन उप-अध्यायों में कहानियों के आधार पर स्त्री-पुरुष सेक्सुअलिटी की नयी अभिव्यक्तियों, पारंपरिक वैवाहिक यौन-संबंधों के भीतर स्त्री-पुरुष सेक्सुअलिटी के प्रश्नों व यौन-संबंधों के बदलते समीकरण और सामाजिक संस्थाओं की चुनौतियों को केंद्र में रखकर सेक्सुअलिटी की अवधारणा पर विचार-विमर्श किया गया है।

विषय सूची

1. सेक्सुअलिटी की अवधारणा : विविध संदर्भ 2. सामाजिक संरचना का स्वरूप : जेंडर और सेक्सुअलिटी के प्रश्न 3. विविध सामाजिक संस्थाएँ : जेंडर और सेक्सुअलिटी के प्रश्न 4. 90 के बाद हिंदी उपन्यासों में सेक्सुअलिटी की अवधारणा 5. 90 के बाद हिंदी कहानियों में सेक्सुअलिटी की अवधारणा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

19. निषाद (जानकी)
हिंदी कथा आलोचना का विकास और सुरेन्द्र चौधरी का आलोचना कर्म।
निर्देशक : डॉ. संजीव कुमार
Th 24824

विषय सूची

1. हिन्दी कथा-आलोचना पर एक विहंगम दृष्टि 2. नयी कहानी आंदोलन और हिन्दी कथा आलोचना 3. सुरेन्द्र चौधरी की आलोचना दृष्टि : कहानी आलोचना में नयी अवधारणाएँ और प्रतिमान 4. सुरेन्द्र चौधरी के आलोचनात्मक लेखन में कुछ प्रमुख कहानीकारों और कहानियों का विवेचन : एक अध्ययन 5. सुरेन्द्र चौधरी की उपन्यास आलोचना 6. सुरेन्द्र चौधरी के आलोचना-कर्म में निहित अन्य सैद्धान्तिक पक्ष। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

20. नेगी (किरन)
विशाल भारद्वाज की फिल्मों के संदर्भ में साहित्य और सिनेमा के अंतःसंबंध का अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. प्रदीप कुमार सिंह
Th 24825

सारांश
(सत्यापित)

सिनेमा को कथा साहित्य से ही मिली जो आज भी जारी है। साहित्य को लेकर सिनेमा बनाने की होड़ में वह दौर भी आया जब फिल्मकारों ने महान साहित्यिक कृतियों को बिना समझे ही उस पर फिल्में बनाना शुरू कर दिया। उन्होंने जल्दबाजी में मूल कृतियों की आत्मा को बिना पहचाने ही उसका स्वरूप गढ़ दिया। उदाहरण मुंशी प्रेमचंद की कालजयी कृति 'गोदान' ने फिल्म रूप में अपनी ख्याति खो दी और फिल्म गुमनामी के अंधेरे में गुम गयी। लेकिन जब-

जब फिल्मकारों ने साहित्यिक कृतियों को तत्कालीन परिवेश में संदर्भ में समझते हुए उसका फिल्मांकन किया है उनकी फिल्में कालजयी हो गयी है। ऊर्जावान साहित्य पर ऊर्जावान सिनेमा बनाये जाने की जो परंपरा सिनेमा के आरम्भिक काल से शुरू हुयी थी वह व्यवसायिकता की चपेट में आकर दम तोड़ने लगी थी। ऐसे समय में दम तोड़ते साहित्य के साथ आधुनिक सिनेमा के संबंधों में कुछ उत्साही और दूरदर्शी सोच रखने वाले निर्देशकों ने आगे बढ़कर सामाजिक सरोकारों वाले कथानकों को साथ लिये सामाजिक उद्देश्यों के साथ फिल्में बनायी। विदेशी कथानकों पर आधारित होने के बाद भी उनकी फिल्मों में भारतीय दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से नजर आता है। उनके कथानक शेक्सपीयर जैसे पुराने साहित्यकार के नाटकों पर आधारित है बावजूद इसके वह अपनी फिल्मों में आधुनिकता का पुट रखते हैं। विशाल का यह साहित्यिक प्रेम इस लिहाज से भी अहम है कि उन्होंने हिन्दी फिल्मों के लिये अंग्रेजी साहित्य के कथानक को चुना। आज जहाँ हिन्दी साहित्य हिन्दी फिल्मों के कथानक के रूप में दूर होता जा रहा है वही विशाल जैसे फिल्मकार विदेशी साहित्य का भारतीयकरण करने में सफल रहे हैं। विशाल जी ने शेक्सपीयर और रस्किन बांड की कृतियों पर न केवल फिल्म बनायी बल्कि उसे भारतीय दर्शकों के अनुरूप ढ़ाल कर उसे अपार सफलता की बुलंदियों तक पहुँचाया।

विषय सूची

1. सिनेमा का सच और साहित्यिक सरोकार 2. सामाजिक यथार्थ का बदलता संदर्भ और सिनेमा 3. हिंदी सिनेमा का संकट, साहित्यिक कृतियां और विशाल भारद्वाज की फिल्में 4. समकालीन सिनेमा-संस्कृति में विशाल भारद्वाज होने का अर्थ 5. हैदर का विवाद, विशाल भारद्वाज और उनकी फिल्में 6. बॉलीवुड सिनेमा का व्यावसायीकरण और समकालीन सामाजिक दबाव 7. साक्षात्कार : कुछ अपने सवालों के जवाब। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

21. प्रजापति (अजय कुमार)
भक्तिकालीन कृष्णकाव्य में सामंत विरोधी मूल्य।
निर्देशक : बृज किशोर
Th 24826

सारांश
(असत्यापित)

सामंती ज़माने में भक्तिकालीन कृष्णकाव्य ऐसे अनेक वर्जनाओं को तोड़ने का प्रयास करता है जो निःसंदेह सामंती मूल्यों के अधीन था। धर्म, जाति-पाति, छुआछूत, ऊँच-नीच अदि के भेदभाव से ऊपर उठकर तत्कालीन कृष्ण भक्तिकाव्य ने समाज में समानता, प्रेम, दया, सौहार्द्र, विश्वबंधुत्व, सत्य आदि जीवन-मूल्यों को संजोने का प्रयास किया। निःसंदेह यह

काव्य जनजागरण का काव्य है जहां सामंती मान्यताओं का विरोध उस स्तर तक होता है कि स्त्री समानता, जाति-पाति, छुआछूत और ऊंच-नीच के भेदभाव तिरोहित होने लगते हैं। मध्यकालीन सामंती जकड़न और यत्नशीलता के मध्य आम जनमानस के हृदय से ऐसी झंकार उठी कि सम्पूर्ण जन समाज उनके सप्तसुरों की झंकार से झंकृत हो उठें। भक्तिकालीन कृष्णकाव्य की रचना उसी झंकार का परिणाम है जिसके अंतर्गत भक्त कवियों एवं कवयित्रियों ने सरस होकर रागात्मक स्वरूप में काव्य रचा और गाया। तत्कालीन सामंतवादी युग में भक्तिकालीन कृष्ण काव्यधारा के रचनाकारों में अभिव्यक्ति पूर्णता और आत्मानुभूति की सघनता दिखाई पड़ती है जिसके अंतर्गत इस धारा के लगभग सभी भक्त 'प्रेम' को अपनी कविताओं का केंद्र-बिंदु बनाकर सामाजिक चेतना से रूढ़िवाद और कुलीनता के विरुद्ध विद्रोह का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस मार्ग में स्वच्छंद प्रेमाभिव्यक्ति कई रूपों में मध्ययुगिन सामंती समाज के विरुद्ध भक्त कवियों की अभिव्यक्ति रही है, जो कि उनकी तन्मयता, पूर्ण समर्पण और स्वच्छंद प्रेम की पहचान है। सामंती युग के पुरुष प्रधान समाज में प्रेमाभिव्यक्ति ही एक ऐसा मात्र उपाय था जिसके द्वारा नारी अस्मिता की पहचान, उसके 'स्व' एवं अस्तित्व को तलाशने में सहायता मिलती है। पितृसत्तात्मक समाज के सम्मुख उसकी हैशियत प्रायः धार्मिक नियमों, सामाजिक परम्पराओं आदि पर आधारित थी जिसका तत्कालीन कृष्णभक्त कवियों एवं कवयित्रियों ने सामाजिक दृष्टि से प्रतिकार करना उचित समझा। सामंती बंधनों के खिलाफ होकर मीरा, ताज एवं अष्टछाप के कवियों ने सामंती तंत्र के स्वामियों की इच्छाओं के विरुद्ध बगावत करना आरम्भ कर दिया।

विषय सूची

1. सामंतवाद : अर्थ, परिभाषा और स्वरूप 2. भक्तिकालीन सामंत विरोधी मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में भक्त कवियों के स्वर 3. भक्तिकालीन कृष्णकाव्य में सत्ता और समाज 4. सामंतविरोधी मूल्य और भक्तिकालीन कृष्णकाव्य 5. भक्तिकालीन कृष्णकाव्य में लोक और शास्त्र। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

22. प्रीति

इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में वर्जना-मुक्ति का स्वरूप (विशेष सेंदर्भ : मैत्रेयी पुष्पा, जयश्री रॉय और भगवानदास मोरवाल के उपन्यास)।

निर्देशक : प्रो. मोहन

Th 24827

सारांश

(असत्यापित)

मेरे शोध का विषय "इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यास में वर्जना-मुक्ति का स्वरूप (विशेष संदर्भ : मैत्रेयी पुष्पा, जयश्री रॉय और भगवानदास मोरवाल के उपन्यास) हैं. इस शोध के

अंतर्गत यह बताने का प्रयास किया गया है कि हमारे पुरुषप्रधान समाज में वर्जनाओं की जड़े निहित हैं. पुरुषप्रधान व्यवस्था स्त्री के श्रम पर अधिकार, स्त्री-प्रजनन, स्त्री-यौनिकता पर न सिर्फ नियन्त्रण करते हैं अपितु स्त्री को उनके मूलभूत अधिकार जैसे सम्पति का अधिकार , आर्थिक स्वतंत्रता, निर्णय लेने की स्वतंत्रता से भी वंचित रखती है. आधुनिक शिक्षा ने स्त्री को मानसिक मजबूती दी है. अब वह समाज में फैली तमाम तरह की वर्जनाओं , निषेधों को तोडकर अपने अधिकार व स्वतंत्रता को हासिल कर सहज जीवन जीने की दिशा में प्रयत्नशील हैं . इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में वर्जना मुक्ति की पडताल के क्रम में यह पाया कि ज्यतातर वर्जनाएं स्त्रियों पर आरोपित हैं. मैत्रेयी पुष्पा हों या जयश्री रॉय या फिर भगवानदास मोरवाल इनके लेखन में वर्जनाओं से पर्दा उठाने की कोशिश की गई हैं . जिसे हम अक्सर देख कर अनदेखा कर देते हैं. उन्ही वर्जनाओं में स्त्री-खतना , हलाला ,देह-मुक्ति की वर्जनाएं सर्वाधिक प्रमुख है.

विषय सूची

1. वर्जना : अवधारणा और स्वरूप 2. इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यास और वर्जना-मुक्ति 3. मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में वर्जना-मुक्ति का स्वरूप 4. जयश्री रॉय के उपन्यासों में वर्जना-मुक्ति का स्वरूप 5. भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में वर्जना-मुक्ति का स्वरूप। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

23. पवार (भारत)
लोकप्रिय हिन्दी उपन्यासों के चरित्रों का समाजशास्त्रीय अध्ययन (देवकी नंदन खत्री, गुरूदत्त एवं शिवानी के विशेष संदर्भ में)
निर्देशक : डॉ. कृष्ण शर्मा
Th 24828

सारांश
(असत्यापित)

निम्नवर्गीय और निम्न मध्यवर्गीय पाठकों की आशाओं आकांक्षाओं और मन-बहलाव को केंद्र मेंरखकर लिखे जाने वाले साहित्य को लोकप्रिय साहित्य कहा जाता है। अंग्रेजी साहित्य में लोकप्रिय साहित्य की शुरुआत जासूसी और हॉरर कथाओं से होती है इन उपन्यासों की मांग व बिक्री अधिक होने के कारण इनको 'बैस्ट सेलर' का तमगा दिया गया। इसके पश्चात आधुनिक आधुनिक लोकप्रिय साहित्य का पर्याय बन चुके जासूसी उपन्यासों के सूत्रपात के साथ ही हॉरर कथाओं की लोकप्रियता को पीछे छोड़ जासूसी उपन्यासों ने लोकप्रियता के नए कीर्तिमान स्थापित किए। हिंदी में लोकप्रिय साहित्य की शुरुआत हिंदी साहित्य का इतिहास नामक इतिहास ग्रंथ में आचार्य शुक्ल ने देवकीनंदन खत्री और किशोरीलाल गोस्वामी के

साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करके की, तब से ही हिंदी में लोकप्रिय और कलात्मक साहित्य नामक बहस की शुरुआत हुई। शोध प्रबंध में लोकप्रिय साहित्य को दो भागों, शिष्ट साहित्य के समानांतर रचे जाने वाले उपन्यास और पटरी साहित्य के रूप में बांटकर अध्ययन किया गया है, जिससे उचित निष्कर्ष निकाले जा सके। शोध प्रबंध में देवकीनंदन खत्री, गुरुदत्त और शिवानी के उपन्यासों के पात्रों का समाजशास्त्रीय अध्ययन करने के पश्चात 1880 के आसपास के सामंती परिवेश के साथ स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता पश्चात की राजनीति और समाज की यथार्थ जानकारी प्राप्त होती है। लोकप्रिय साहित्य के प्रचार-प्रसार में प्रकाशकों की अहम भूमिका है। हिन्द पॉकेट बुक्स की एक रुपए में पाठकों तक पुस्तक पहुंचाने की योजना की सफलता के बाद से ही पॉकेट बुक्स कल्चर प्रकाशकों के बीच लोकप्रिय हुआ और कालांतर में इन्ही पॉकेट बुक्स द्वारा लोकप्रिय साहित्य का प्रकाशन किया गया। सिनेमा ने भी लोकप्रिय साहित्य की कथा को आधार बनाकर इसकी लोकप्रियता को बढ़ाने का कार्य किया। अतः इस प्रकार के साहित्य की उपेक्षा न करके इसका तटस्थ मूल्यांकन किए जाने की आवश्यकता है, जिससे समाज के अछूते पक्ष को पाठकों के सामने लाया जा सके।

विषय सूची

1. लोकप्रिय साहित्य : अवधारणा एवं विकास 2. साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन : अवधारणा एवं स्वरूप 3. हिंदी का लोकप्रिय साहित्य ओर लोकप्रिय हिंदी उपन्यास 4. लोकप्रिय हिंदी उपन्यासों के चरित्रों का समाजशास्त्रीय अध्ययन 5. लोकप्रिय उपन्यासों का बाजार व पाठक। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

24. पाण्डेय (अमित कुमार)
बालमुकुंद गुप्त का साहित्य ओर हिन्दी नवजागरण।
निर्देशक : डॉ. संजय शर्मा
Th 24829

सारांश
(असत्यापित)

नवजागरण एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है, जिसका सम्बन्ध पंूजीवादी विकास के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। यह प्रक्रिया मध्यकालीन सामंती मूल्यों के अवमूल्यन एवं नवीन पूंजीवादी मूल्यों के विकास के रूप में घटित होती है। भारत में इसकी शुरुआत 19वीं शताब्दी के आरम्भ से ही राजा राममोहन राय इत्यादि के विचारों एवं कार्यों से होती है। हिन्दी क्षेत्र में इसकी शुरुआत 1857 की क्रान्ति के पश्चात् भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के विचारों एवं कार्यों से हुई है। बालमुकुंद गुप्त का सम्बन्ध इस नवजागरण कालीन चेतना के साथ जुड़ा हुआ है।

वे अपने समय के सबसे अनुभवी एवं कुशल सम्पादक थे। उनके लेखों में तत्कालीन भारत के औपनिवेशिक चरित्र के सटीक उद्‌घाटन मिलता है। सामाजिक चेतना की दृष्टि से गुप्त जी हिन्दू-मुस्लिम एकता के पक्षधर होने के नाते आधुनिक विचारधारा के संवाहक ठहराये जा सकते हैं। वे बाल-विधवा विवाह के पक्षधर थे। विभिन्न जातियों, धर्मों और संस्कृतियों के सहअस्तित्व की प्रतिपादकता उनके व्यक्तित्व को बहुआयामी बनाता है। सम्मिलित परिवार, पारिवारिक मूल्यों की रक्षा और प्रत्येक स्तर पर दायित्वबोध के प्रति सजगता उनकी सामाजिक चेतना के स्तंभ स्वीकार किये जा सकते हैं। उन्होंने भाषा की अन्तरप्रान्तीयता और लिपि की एकसूत्रता पर बल दिया। स्वतन्त्र पत्रकारिता के मूल्य स्थापित किये। हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार के साधन के रूप में हिन्दी पुस्तकों की बिक्री एवं पाठक-वर्ग की संख्या में वृद्‌धि को मानते हैं। उन्होंने हिन्दुस्तानियों को उनकी सभ्यता, संस्कृति, स्वाभिमान की न केवल याद दिलाते रहे बल्कि अंग्रेजी-राज के अत्याचार, अन्याय, कुप्रशासन और शोषण का सेंसरशिप के सख्त समय में विडम्बना, व्यंग्य, विनोद के लपेटन में अंग्रेजों के प्रति भारतवासियों को जागृत भी करते रहे। अतः नवजागरण के अग्रदूतों में गुप्त जी का स्थान अप्रतिम रूप से स्वीकार किया जा सकता है।

विषय सूची

1. नवजागरण : स्वरूप एवं विशेषताएं 2. हिन्दी नवजागरण : बहस और विमर्श 3. बालमुकुंद गुप्त का साहित्य : एक विवेचनात्मक परिचय 4. बालमुकुंद गुप्त के साहित्य में नवजागरण की बिन्दुवार पहचान 5. विचारको के माध्य बालमुकुंद गुप्त की स्थिति। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

25. पाण्डेय (आरती)
मन्नू भंडारी की कहानियों में उभरती नारी चेतना और बदलते स्त्री-पुरुष संबंध।
निर्देशक : डॉ. बृज किशोर
Th 24830

सारांश
(असत्यापित)

आधुनिकता को मध्यकालीन जड़तावादी व रूढ़िवादी भावबोध के विपरीत माना जाता है। आधुनिक जन-जीवन परम्परावादी जीवन-शैली से सर्वथा भिन्न है। वस्तुतः आधुनिकता के दरवाजे पर परम्परावादी व रूढ़िवादी भावबोध दम तोड़ देती है। आधुनिकता के साँचे ने नए मनुष्य की सृष्टि की है। आज का मनुष्य व्यक्तिनिष्ठ है, आत्मग्रस्त है साथ-ही भोगवादी है। भोगवादी जीवन-दृष्टि के मूल में पूँजीवादी संस्कृति व बाजारवाद है। पूँजीवादी व बाज़ारवादी संस्कृति ने मनुष्य के मानस-पटल को पहले से अधिक कठोर, निर्मम व हिंसक बनाया है। कठोर, निर्मम व हिंसक वातावरण आज चारों ओर नज़र आता है। मनुष्य की

संवेदनशीलता और सहिष्णुता रोज-ब-रोज कम से कमतर हो रही है। मनुष्य का जीवन चहुँ ओर से संत्रास, कुंठा, अकेलेपन, घुटन, अलगाव, घृणा, द्वेष, तनाव आदि विकारों से घिरा नज़र आता है। पारिवारिक जीवन में भी ये विकार बहुत गहराई तक घुस आए हैं। पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका, माँ-बेटे के संबंधों में भी कटुता व तनाव आ गया है। सहज जीवन और सरस व्यक्तित्व आज सिर्फ कल्पना प्रतीत होते हैं। संबंधों में जटिलता आ गई है। यह नया समाज अपने पूर्व के समाज से सर्वथा अलग है। सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनैतिक और आर्थिक वातावरण में लगातार परिवतर्न हो रहे हैं। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप समाज का परंपरागत ताना-बाना भी चरमरा रहा है। मोबाइल, इंटरनेट और सोशल मीडिया की नई दुनिया ने भी इस परिवर्तन को तेज़ गति प्रदान की है। अस्मिता, नैतिकता, ऊँचे आदर्श, सत्यता जैसे शब्दों के अर्थ आज भोथरे हो गए है। समाज के बदलते रूप के दर्शन, आज साहित्य में भी प्रमुखता से दृष्टिगोचर होते हैं। स्त्री-पुरुष संबंधों में हो रहे बदलाव को कथाकार मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में बखूबी विश्लेषित किया है। मन्नू भंडारी अपनी कहानियों में समकालीन समाज के यथार्थ का नग्न चित्र सूक्ष्म दृष्टि से खींचती हैं। आरम्भ में स्त्री-पुरुष संबंध परिवार की दहलीज से शुरू होते थे।

विषय सूची

1. मन्नू भंडारी की कहानियों में अभिव्यक्त समकालीन यथार्थ 2. मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी के व्यक्तित्व का विकास 3. मन्नू भंडारी की कहानियाँ : उभरती नारी चेतना के दस्तावेज़ 4. मन्नू भंडारी की कहानियाँ : स्त्री मन के अंतर्द्वंद्व की अभिव्यक्ति 5. मन्नू भंडारी की कहानियों में स्त्री-पुरुष के बदलते संबंध। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

26. पाण्डेय (गोपेश्वर दत्त)
हिन्दी उपन्यासों में संरचनातमक परिवर्तन (1947 से 90)।
निर्देशिका : डॉ. हर्षबाला शर्मा
Th 24831

सारांश
(असत्यापित)

उपन्यास जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति है। उपन्यास का जन्म भारतीय परम्परा से हो या पाश्चात्य परम्परा से, यह तो निर्विवाद है कि उपन्यास जीवन के सर्वाधिक निकट की विधा है। जन्म से लेकर अब तक उपन्यास की संरचना राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों के साथ कदमताल करती रही है। उपन्यास की संरचना उसके तत्वों पर निर्भर करती है। उपन्यास के छः तत्वों यथा-कथावस्तु, पात्र, भाषा-शैली, परिवेश, संवाद, उद्देश्य में परिवर्तन उपन्यास की संरचना को प्रभावित करता है। किसी भी एक तत्व का

उपन्यास में प्रभावी होना उपन्यास का प्रकार निर्धारित करता है कि उपन्यास महाकाव्यात्मक है, चरित्र-प्रधान है, शिल्प-प्रधान है, कथात्मक है या समय की यथार्थ की अभिव्यक्ति...। इस शोध कार्य में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित है कि भाषा की संरचना भी उपन्यास की संरचना को वर्तमान समय में सर्वाधिक प्रभावित करती रही है। संरचनावादी भाषिक उपागमों को भी उपन्यास की आलोचना या उपन्यास की संरचना के विश्लेषण में प्रयोग किया जा रहा है किंतु अभी इसके सिद्धान्तों में विविधता और अस्थिरता के कारण यह पद्धति आरम्भिक अवस्था में है। हिन्दी उपन्यासों के विश्लेषण और मूल्यांकन में संरचनावादी उपागमों की महत्ता असंदिग्ध है। अब इसे केवल भाषा तक ही सीमित नहीं माना जा सकता, जरूरत किसी ऐसी प्रतिभा की है जो इन उपागमों से हिन्दी उपन्यासों की संरचना का विश्लेषण कर सके।निष्कर्ष है कि उपन्यास के तत्व उसकी संरचना को प्रभावित करते हैं और संरचनावादी उपागमों का भी प्रयोग भाषा की संरचना के विश्लेषण के साथ ही, उपन्यास की संरचना के विश्लेषण में किया जा सकता है। संरचना उपन्यास के कथ्य तथा संप्रेष्य के अनुसार बदलती रहती है।

विषय सूची

1. संरचना का अर्थ एवं अवधारणा, उपन्यास की संरचना 2. कथावस्तु के आधार पर औपन्यासिक संरचना में परिवर्तन 3. उपन्यास में चरित्रगत् अवधारणा और औपन्यासिक संरचना में परिवर्तन स्वातंत्र्योत्तर सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियाँ और औपन्यासिक संरचना में परिवर्तन 5. आजादी के बाद का समय और उपन्यास में शिल्पगत् परिवर्तन (विविध संदर्भ) 6. हिन्दी उपन्यास : भाषा और संरचनात्मक परिवर्तनों के संदर्भ में विविध उपन्यासकारों की मान्यताएं। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

27. पाण्डेय (विजयलक्ष्मी)
हिन्दी सिनेमा में स्त्री की बदलती छवियों का अध्ययन (विशेष संदर्भ : 21वीं सदी की फिल्में)।
निर्देशक : प्रो. कैलाश नारायण तिवारी
Th 24832

सारांश
(असत्यापित)

हिंदी सिनेमा में स्त्री की बदलती छवियों का अध्ययन (विशेष संदर्भ : 21वीं सदी की फिल्में) के लिए आरंभ से लेकर अब तक के हिंदी सिनेमा का एक शोधकर्त्री की दृष्टि से विश्लेषण करते हुए और स्त्री-छवियों को उनकी समग्रता में देखते-समझते हुए, मैंने यह पाया कि परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है और हर दौर के समाज की चुनौतियां और समस्याएं अपने पूर्व-समाज से कुछ भिन्न होती हैं। इस अर्थ में हर दौर का सिनेमा भी अपने देशकालानुरूप अपनी सिने-भाषा गढ़ता है। इस प्रक्रिया में स्त्री-छवि का स्त्रीवादी सैद्धांतिकी के माध्यम से

अध्ययन करते हुए यह पता चलता है कि अमूमन स्त्री की प्रस्तुति को एक दे दिए गए अर्थ में देखने की परंपरा है। इसके लिए स्त्री की रूढ़ छवियों का भरपूर इस्तेमाल किया जाता है। हिंदी सिनेमा के प्रादुर्भाव से स्त्री की भूमिका पुरुष द्वारा निभाए जाने से लेकर स्त्री के नायकत्व तक के समय को देखते-पढ़ते- समझते हुए यह निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी सिनेमा मूलतः पितृ-सत्तात्मक और स्त्री-विरोधी रहा है, लेकिन जैसे-जैसे समाज बदला, नई चुनौतियां आईं... वैसे-वैसे कहानियां भी बदलीं और स्त्री-उपस्थिति और उसकी भूमिकाओं का मूल्यांकन भी बदला। आज निरंतर स्त्री के बदलते चेहरे को हिंदी सिनेमा में पहचानने और उसे अभिव्यक्त करने की कोशिश की जा रही है। फलतः 21वीं सदी के सिनेमा में हम स्त्री के उस रूप को परदे पर पाते हैं जो अब तक उसके लिए वर्जित था। इस प्रकार देखें तो हिंदी सिनेमा में जहां एक तरफ नाउम्मीदी की पितृ-सत्तात्मक उमस तो है, तो दूसरी तरफ उसमें स्त्री-प्रतिरोध की ठंडी हवा के झोंकों की फुहार भी है। आज की स्त्री अपनी पूर्ववर्ती पितृसत्ता से ग्रसित छवि को निरंतर तोड़ रही है। ये परिवर्तन की राह है और यहां यह कहा जा सकता है कि 21वीं सदी की स्त्री-छवि यह उम्मीद जगाती है कि स्त्री-पुरुष समानता वाली सुबह जरूर आएगी।

विषय सूची

1. स्त्रीवादी सैद्धांतिकी : अवधारणा और स्वरूप 2. हिन्दी सिनेमा : उद्भव एवं विस्तार 3. स्त्री छविः निर्मिति और निर्माता 4. हिन्दी सिनेमा में स्त्री-छवियों के परिवर्तन 5. 21वीं सदी के हिन्दी सिनेमा का स्त्रीवादी अध्ययन (2000-2016 तक की हिन्दी फिल्में)। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

28. बंसल (लक्ष्मी)
स्त्री आत्मकथाओं में सामाजिक राजनैतिक पराधीनता का यथार्थ और मुक्ति का द्वंद्व।
निर्देशिका : डॉ. पज्ञा
Th 24833

विषय सूची

1. आत्मकथा : साहित्य में आत्मकथा का स्थान 2. आत्मकथा लेखन की परंपरा 3. आत्मकथा लेखन : जाति और लिंग का विभेद 4. स्त्री आत्मकथाओं में यातना के यथार्थ का चित्रण 5. स्त्री आत्मकथाओं में मुक्ति के विमर्श का स्वर : स्त्री आत्मकथा के संदर्भ में। उपसंहार। साक्षात्कार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

29. मिश्र (विशाल)
डॉ. रामविलास शर्मा क`लेखन में मार्क्सवादी सौन्दर्यबोध और भारतीय सौन्दर्यबोध का द्वन्द्व।
निर्देशक : प्रो. अनिल राय
Th 24834

सारांश
(असत्यापित)

डॉ. रामविलास शर्मा की प्रमुख चिन्ता यह थी कि मार्क्सवादी आलोचना भारतीय साहित्य के साथ कैसा व्यवहार करे? उनका मानना है कि देश के स्तर पर सामंतवाद और उसके अगले स्तर पर साम्राज्यवाद मानव संस्कृति की दो बड़ी अड़चने हैं। डॉ. रामविलास शर्मा इन दोनों से टकराते हैं। भारतीय समाज, संस्कृति और इतिहास को समझने हेतु डॉ. रामविलास शर्मा ने मार्क्सवादी विचारधारा का सहारा लिया। इस क्रम में कई बार वे उत्साहित होते हैं तो कई बार उससे संघर्ष भी करते हैं। भारतीय समाज और संस्कृति से वह पुरज़ोर रूप से वे टकराते हैं और स्थितियाँ ऐसी बनती हैं कि मार्क्सवाद भी खण्डित नज़र आता है। फलस्वरूप भारतीयता के सन्दर्भ में कुछ नयी बातें निकलकर आती हैं। इस प्रकार उनका द्वन्द्व नए चिंतन को उत्पन्न करता है। यूरोपीय दर्शन और भारतीय दर्शन की उन्होंने श्रेष्ठ तुलना की है। प्राचीन साहित्य जैसे वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति औरत तुलसीदास की सहायता से वे प्रेमचन्द और निराला की तह तक पहुँचते हैं। उनका मानना है कि भारत का संकट सिर्फ राजनीतिक संकट नहीं, बल्कि वैचारिक संकट भी है और इस वैचारिक संकट को समझने के लिए वे ज्ञान के विविध आयाम तराशते हैं। कुल मिलाकर यह प्रश्न उठता है, क्या सौन्दर्यबोध, इन्द्रियबोध, भावबोध और सहृदयता साहित्य को श्रेष्ठ बनाने के आधारभूमि नहीं हैं? डॉ. रामविलास शर्मा ने जड़ता के बगैर साहित्य में मार्क्सवादी मूल्यांकन पेश किये हैं और इसी मानदण्ड पर साहित्यिक युगों की व्याख्या भी की है। यही कारण है कि रचनाकारों और उनकी विशेषताओं व युगों के द्वन्द्व तो उन्होंने देखा लेकिन उन द्वन्द्वों में उलझे नहीं। चुनौतियाँ उन्हें हमेशा स्वीकार थीं और तर्कसम्मत तरीके से वे उसका सामना करते थे। वर्तमान में भी डॉ. रामविलास शर्मा के चिंतन पक्ष को लेकर विमर्श के दरवाजे खुले हैं। बावजूद इसके डॉ. रामविलास शर्मा का लेखन भारतीय साहित्य में प्रासंगिक बना रहेगा।

विषय सूची

1. सौन्दर्यबोध से अभिप्राय 2. रामविलास शर्मा का साहित्यिक परिचय 3. रामविलास शर्मा का सौन्दर्यशास्त्रीय दृष्टिकोण 4. रामविलास शर्मा के साहित्य में मार्क्सवादी ओर भारतीय सौन्दर्यबोध का द्वन्द्व 5. रामविलास शर्मा के साहितयों में भाषिक सौन्दर्य। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

30. मीणा (पूनम)
वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों का स्त्री-दृष्टि से अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह
Th 24835

सारांश
(सत्यापित)

राष्ट्रीय आन्दोलन के युग में वृन्दावनलाल वर्मा एतिहासिक उपन्यासों के माध्यम से राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना जागृत करते हैं। देशवासियों को अपने कर्त्तव्य–कर्म की ओर प्रेरित करने के उद्देश्य से वर्मा जी भारतीय इतिहास की श्रेष्ठ नारियों यथा– रानी लक्ष्मीबाई, महारानी दुर्गावती, रानी अवन्तीबाई, देवी अहिल्याबाई आदि का चुनाव अपने उपन्यासों के लिए करते हैं। वर्मा जी के शब्दों में इतिहास से छानबीन कर ऐसे चरित्र लिए जो किसी भी देश के नारी के चरित्र से नाप–तौल में वरिष्ठ और गरिष्ठ बैठते हैं। इतिहास प्रसिद्ध पात्रों के अतिरिक्त वर्मा जी ऐसे पात्रों को भी इतिहास के गर्भ से निकाल कर लाते जिन्हें इतिहासकारों द्वारा महत्त्व नहीं दिया गया किन्तु भारतीय स्वाधीनता संग्राम में उनके महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई उपन्यास की झलकारी भारतीय स्वाधीनता संग्राम में दलित स्त्रियों के साहस और आत्म बलिदान की अमिट छाप पाठकों के हृदय पर छोड जाती है। वर्मा जी की विशिष्टता यह है कि वे भारतीय स्वाधीनता संग्राम में साधारण तथा निम्न वर्ग की नारियों के योगदान को रेखांकित करना नहीं भूले हैं। स्त्री स्वातंत्र्य के युग में वर्मा जी भारतीय नारी की साहसी, संघर्षशील, त्यागमयी, कर्त्तव्यनिष्ठ, स्वाधीनताप्रिय, आत्मसम्मान से युक्त, अधिकारों के लिए सचेत, अन्यायौ के विरुद्ध आवाज उठानेवाली, रूठियों से लडनेवाली, जनकल्याण के लिए प्रस्तुत और राष्ट्र के लिए प्राणों का उत्सर्ग करनेवाली सशक्त नारी की छवि को ऐतिहासिक तथ्यों तथा प्रमाणों के आधार पर साकार करने में सफल हुए हैं।

विषय सूची

1. वृन्दावनलाल वर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व 2. स्त्री–दृष्टि अवधारणा एवं विकास 3. वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में स्त्री पात्रों की स्थिति 4. वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में स्त्री–समस्या : अभिज्ञान एवं समाधान 5. वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में स्त्री–पात्रों का महत्त्व और भूमिका। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

31. मीना (बीना)
स्वाधीनता आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में छायावादयुगीन प्रमुख साहित्यिक पत्रिकाओं का विश्लेषण।
निर्देशक : प्रो. कुमुद शर्मा
Th 24836

सारांश
(असत्यापित)

इस शोध प्रबंध में छायावादयुगीन साहित्यिक पत्रिकाओं का तत्कालीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में विश्लेषण किया गया है| छायावाद और स्वाधीनता आन्दोलन की पृष्ठभूमि,पत्रिकाओं में व्यक्त युगबोध एवम हिंदी भाषा आंदोलन पर विस्तार से विवेचन किया गया है| नवजागरण के विभिन्न पहलुओं,नारी जाति केउत्थान सम्बन्धी प्रश्नों और सामाजिक कुरूतियों के विरुद्ध पत्रिकाओं के स्वरों एवम सरकारी नीतियों के प्रति दृष्टीकोण को उजागर करने की कोशिश की गई है| गांधीवाद एवं समाजवाद का पत्रिकाओं के सन्दर्भ में विश्लेषण किया गया है|

विषय सूची

1. स्वाधीनता आन्दोलन और छायावाद 2. छायावाद पर साहित्यिक पत्रिकाओं का प्रभाव 3. छायावादयुगीन साहित्यिक पत्रिकाओं में अभिव्यक्त प्रमुख समस्याएँ 4. छायावादयुगीन प्रमुख साहित्यिक पत्रिकाएँ और स्वाधीनता आन्दोलन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

32. मीना (विद्याराम)
प्रभा खेतान का गद्य साहित्य : विमर्श के विविध आयाम।
निर्देशिका : डॉ. ममता वालिया
Th 24926

सारांश
(असत्यापित)

हिन्दी गद्य साहित्य में प्रभा खेतान महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उनके द्वारा लिखा गया साहित्य अपने युग व समाज की वास्तविक स्थितियों से अवगत ही नहीं कराता बल्कि सम्पूर्ण मनःस्थितियों को झकझोर कर हमें कुछ नया सोचने को मजबूर करता है। प्रभा खेतान 90 के दशक की एक प्रभावशाली लेखिका हैं। बंगाल के मारवाड़ी समाज में जन्मी प्रभा खेतान ने दर्शनशास्त्र विशेषकर ज्यां पाल सात्र्र पर अपना शोध किया है। प्रारंभ में कविता अवश्य लिखी परन्तु उनका मन गद्य साहित्य में ही रमा। ऐसी स्थिति में उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज को एक नयी दिशा दी। प्रभा खेतान ने अपने साहित्य के माध्यम से यह दिखाने की कोशिश की है कि भारतीय समाज में स्त्री न केवल परम्परागत व ऐतिहासिक मान्यताओं से टकराती है बल्कि यह भी दिखलाती है कि पुरुष के समान भी स्त्री देश और समाज का काम करने में सक्षम है। प्रभा खेतान नारीवादी विचारक हैं। उनके लेखन का अधिकांश हिस्सा स्त्री जीवन और उसके संघर्ष से सम्बद्ध रहा है। स्त्री जीवन के अनेक

रूपों, अनुभवों एवं संघर्षों के जरिए लेखिका विमर्शों का व्यापक एवं वैविध्यपूर्ण स्वरूप रचती है। प्रभा खेतान के साहित्य में मुख्य रूप से तीन विमर्श देखने को मिलते हैं। स्त्री विमर्श, प्रवासी विमर्श व भूमण्डलीकरण। मेरा शोध विषय विमर्श के विविध आयाम है। इसलिये मैंने इन विमर्शों के साथ-साथ आदिवासी विमर्श एवं दलित विमर्श आदि की भी चर्चा की है।

विषय सूची

1. समकालीन समय और विमर्शों की अवधारणा 2. प्रभा खेतान के साहित्य पर भूमंडलीकरण का प्रभाव 3. प्रभा खेतान के साहित्य में स्त्री जीवन के विविध आयाम 4. प्रभा खेतान के गद्य साहित्य में सांस्कृतिक विस्थापन 5. भाषा और शिल्प के स्तर पर प्रभा खेतान का गद्य साहित्य। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

33. मीनाक्षी रानी
रघुवीर सहाय की काव्य-भाषा।
निर्देशक : प्रो. मोहन
Th 24837

सारांश
(असत्यापित)

बहुमुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार रघुवीर सहाय की कविताएँ अपनी भाषा की दृष्टी से महत्त्व रखती हैं l इनकी कविताएँ ध्वनि, शब्द, लोकोक्तियों, मुहावरों, छंद, सपाटबयानी, नाट्य-शिल्प, प्रगीतात्मकता आदि की दृष्टी से नए आयामों को छूती है l स्वरागम, स्वर लोप, स्वर विकृति, व्यंजनागम, व्यंजनलोप, व्यंजन विकृति के स्तर पर ध्वनि-प्रयोग के नए उदाहरण इनकी काव्य-भाषा की विशिष्ट पहचान है l अर्थवान शब्दों की तलाश इनकी कविता की भाषा का प्राण है l विचलन के प्रयोग से भावो की सशक्त अभिव्यक्ति संभव हुई है l लोकोक्तियों और मुहावरों के नए प्रयोग इनकी कविताओं का विशेष आकर्षण है l इनकी कविताओं में छंद की लय का प्रयोग हुआ है l हँसी के विविध बिंब इनकी काव्य-भाषा को समकालीन रचनाकारों की भाषा से अलग कर एक नये शिखर पर पहुंचाते हैं l इनकी कविताओं में प्रतीक का प्रयोग न के बराबर है l बिंब की अपेक्षा सपाटबयानी का प्रयोग करने पर बल देते हैं l इनकी काव्य-भाषा में नाटक के शिल्प का प्रभाव है l आज़ादी के बाद के तीव्र मोहभंग और विडंबना को इनकी काव्य-भाषा में इसी शिल्प के प्रयोग से सार्थक अभिव्यक्ति मिल सकी है l प्रगीतात्मकता इनकी कविता की अनिवार्यता के रूप में प्रयुक्त हुई है l वैयक्तिक होते हुए भी इनकी कविताएँ सामाजिकता की ओर झुकाव रखती हैं l विविध व्यक्तिवाचक नामों जैसे रामदास, हरचरना, खुशीराम, रजिया आपा, मैकु, नरेन, दयाशंकर और दयावती आदि समाज के खास वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं l इनकी काव्य-भाषा

बोलचाल की भाषा के निकट है l आम आदमी की भाषा का प्रयोग इनकी कविताओं को जनसाधारण से जोड़ता है l इनकी काव्य-भाषा में उप्भोग्तावादी संस्कृति का विरोध है l इस प्रकार भाषा की दृष्टी से इनकी काव्य-भाषा का गहन अध्ययन महत्वपूर्ण है l

विषय सूची

1. पृष्ठभूमि 2. रघुवीर सहाय : जीवन और सर्जनात्मकता 3. रघुवीर सहाय की कविता : भाषा की पहचान (एक) 4. रघुवीर सहाय की कविता : भाषा की पहचान (दो) 5. रघुवीर सहाय की भाषा के कुछ पहलु। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

34. मेघा

हिंदी एवं मराठी दलित आत्मकथाओं का तुलनात्मक अध्ययन।

निर्देशिका : डॉ. रजत रानी आर्य

Th 24838

सारांश

(असत्यापित)

इस शोध प्रबंध को पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है. इसके पहला अध्याय में दलित आत्मकथाओं का स्वरुप, आत्मकथाओं की पृष्ठभूमि, आत्मकथा का इतिहास, हिंदी तथा मराठी दलित आत्मकथाओं और आत्मकथाकारों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है. आधार ग्रन्थ के रूप में हिंदी दलित आत्मकथाएँ- जूठन, तिरस्कृत, मुर्दहिया, मेरा बचपन मेरे कन्धों पर, दोहरा अभिशाप ली गई है तथा मराठी दलित आत्मकथाएँ- अछूत, अक्करमाशी, छोरा कोल्हाटी का, जीवन हमारा ली गई है. अन्य दलित आत्मकथाओं और आत्मकथाकारों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है. दूसरा अध्याय "दलित आत्मकथाओं में व्यक्त सामाजिक स्थिति" में हिंदी और मराठी दलित आत्मकथाओं की सामाजिक स्तर पर तुलना कर, दोनों की समानताओं-असमानताओं को पहचाना गया है. तीसरे अध्याय में आर्थिक स्तर पर दोनों भाषाओँ की आत्मकथाओं की तुलना की गई है. वहीँ चौथे अध्याय में धार्मिक एवं संस्कृतिक आधार पर तुलना की गई है. अंतिम पांचवे अध्याय में शैक्षणिक आधार पर उनकी तुलना की गई. हिंदी और मराठी दलित आत्मकथाओं में सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक आधार पर समानताएं ज्यादा दिखाई देती है. वर्ण व्यवस्थागत भारतीय समाज में जातीय भेदभाव का दंश उत्तर और दक्षिण भारत में दलितों के लिए एक सामान ही है. सम्पूर्ण भारत में शोषण, उत्पीड़न की अधिकता में कमोबेश अंतर होने के बाबजूद भी दलित आत्मकथाकारों ने एक सा दर्द महसूस किया है. अबतक की दलित आत्मकथाओं में ज्यादातर दर्द का वर्णन, भेदभाव तथा गरीबी का वर्णन किया गया है, परन्तु खुशियों का वर्णन नहीं किया गया है. समाज में आज दलितों के प्रति आए बदलावों को रेखांकित नहीं

किया गया है. चूँकि सभी दलितों की स्थिति वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था के आधार पर एक सी है और इसी आधार पर उनका शोषण हुआ है, ऐसे में आज की हिंदी और मराठी दलित आत्मकथाओं में समानता ही ज्यादा दिखाई देती है.

विषय सूची

1. आत्मकथा का स्वरूप 2. दलित आत्मकथाओं में व्यक्त सामाजिक स्थिति 3. दलित आत्मकथाओं में व्यक्त आर्थिक स्थिति 4. दलित आत्मकथाओं में व्यक्त धार्मिक एवं सांसकृतिक स्थिति 5. दलित आत्मकथाओं में व्यक्त शैक्षणिक स्थिति। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

35. यादव (आशीष कुमार)
हिंदी साहित्य में विज्ञान कथा : परंपरा और प्रयोग।
निर्देशक : प्रो. मोहन
Th 24839

विषय सूची

1. विज्ञान कथा : अर्थ, आशय व परंपरा 2. हिंदी साहित्य में विज्ञान कथा पर आधारित उपन्यास 3. हिंदी साहित्य में विज्ञान कथा पर आधारित कहानियाँ 4. हिंदी में विज्ञान कथाओं की भाषा और शिल्प का मूल्यांकन 5. हिंदी साहित्य की विज्ञान कथाओं में नये प्रयोग। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

36. यादव (किशन सिंह)
1990 के बाद की हिन्दी कहानी में संरचनात्मक परिवर्तन का अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. महावीर सिंह वत्स
Th 24840

सारांश
(असत्यापित)

हिंदी कहानी की पूरी यात्रा को, जिसे लेकर कुछ लोग अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से भी इंकार नही करते तो कुछ लोग भारतीय आख्यान परम्परा का ही नए फॉर्म में स्वाभाविक विकास मानते है। इस विधा ने प्रेमचन्द के यहाँ सामाजिक-यथार्थ ग्रहण कर जो परिपक्वता पायी उसकी यात्रा नई कहानी आंदोलन से होते हुए उदारीकरण के बाद के निर्मित हालातों को भी बयाँ कर रही है। कहानी विधा की यात्रा में समय के संघातों ने उसके कलेवर और संरचना में भी ढ़ेर सारा बदलाव किया। नई कहानी में जहाँ कथानक का ह्रास हुआ और जीवन की छोटी-2 अनुभूतियाँ ही कहानी का वर्ण्य विषय बन गई। यह अनुभूतियाँ कहानी के लिए ज्यादा प्रामाणिक मानी गईं। उसी तरह 1990 के नए बाजार, नई तकनीक, नए अनुभव ने भी कहानी की नई संरचना को जन्म दिया। आज भूमण्डलीकरण, उदारीकरण और सूचना क्रांति ने

राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक जीवन को बदल दिया है। इससे तमाम नई समस्याएँ उत्पन्न हुई है जिस कारण आज की विभिन्न समस्याओं से जूझते हुए हिन्दी कहानी का चरित्र बहुआयामी और बहुस्तरीय हुआ है। इसका ढांचा और संरचना आज की समस्या को अभिव्यक्त करने वाला है। इसीलिए इन कहानी की संरचना पहले से भिन्न दिखती है। मुक्त बाजार व्यवस्था, उच्च तकनीक, पूँजी की तानाशाही ये कुछ बिन्दु है जो पहले की कहानी से आज की कहानी को अलग करते है। इसी कारण कहानी का कथ्य भाषा, शैली सभी बदले रूप में दिखते है। ग्लोबल अनुभूति की कहानी पूराने ढाँचे में व्यक्त नहीं की जा सकती। जीवन की जटिलता और बहुस्तरीयता को व्यक्त करने के लिए कहानी का आकार लम्बा तथा कहानी उपशीर्षकों में विभाजित दिखती है। साथ ही कहानी की भाषा पर दृश्य मीडिया और विज्ञापन का प्रभाव भी दिखता है। साइबर और मीडिया की भाषा ने आज की कहानी की भाषिक संरचना को एक नया स्वरूप प्रदान किया है।

विषय सूची

1. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : प्रवृत्ति, स्वरूप और संरचना 2. 1990 के बाद की हिन्दी कहानी में आए संवेदनात्मक बदलाव 3. 1990 के बाद की हिन्दी कहानी पर सामयिक परिस्थितियों का प्रभाव 4. 1990 के बाद की हिन्दी कहानी में आए संरचनात्मक परिवर्तनों का समग्र आकलन 5. अपने समय के विमर्शों की कसौटी पर 1990 के बाद की हिन्दी कहानी-प्रमुख संरचनात्मक परिवर्तन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

37. यादव (चन्द्रशेखर)
हिन्दी कहानी (1980-2010) में पर्यावरणीय संवेदना का स्वरूप।
निर्देशक : डॉ. हेमन्त कुकरेती
Th 24841

सारांश
(असत्यापित)

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में हिन्दी कहानी (1980-2010) में पर्यावरणीय संवेदना के स्वरूप को परखने के लिए पारिस्थितिकी सौन्दर्यशास्त्र के मानदण्डों के आधार पर पर्यावरणीय पाठ कर उनमें निहित पर्यावरणीय संवेदना को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है। यह शोध-प्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय के अन्तर्गत शोधार्थी द्वारा पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी की अवधारणा एवं पर्यावरणीय दर्शन का परिचयात्मक उल्लेख किया गया है। द्वितीय अध्याय में शोधार्थी द्वारा हिन्दी कहानी की विकास यात्रा का सूक्ष्मता से विश्लेषण किया गया है तथा हिन्दी कहानी की विकास यात्रा में पड़ने वाले उन महत्वपूर्ण पड़ावों का समालोचनात्मक विश्लेषण किया गया है जहाँ कहानी में पर्यावरणीय चेतना का तत्व दिखाई पड़ता है। तृतीय अध्याय हिन्दी भाषी भौगोलिक क्षेत्र और हिन्दी

कहानी में पर्यावरण है, जिसमें पर्वतीय, अर्द्धशुष्क और मरूस्थलीय, मैदानी, तराई एवं बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों की कहानियों का क्षेत्रवार विभाजन करते हुए वहां की भौगोलिक एवं पर्यावरणीय तथा सामाजिक स्थितियों के आलोक में कहानी में उभरी पर्यावरणीय संवेदनाओं का सूक्ष्मता से अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। चतुर्थ अध्याय 'शहरी एवं ग्रामीण पृष्ठिभूमि की हिन्दी कहानी में पर्यावरण' पर आधारित है। यह अध्याय मूलतः महानगरीय जीवन की यांत्रिकता, मूल्यहीनता, एकरसता, खोखलापन, संवेदन शून्यता, शोर, धुआं, भीड़, प्रदूषण, टूटन, घुटन व उलझन जैसी नकारात्मक परिस्थितियों के साथ-साथ रोजगार की सुलभता, संसाधनों की अधिकता तथा शहरी चकाचैंध पर आधारित हिन्दी कहानियों के अध्ययन पर आधारित है तथा पाँचवां अध्याय में कहानियों के पर्यावरणीय पाठ के माध्यम से यह रेखांकित किया गया है कि भूमण्डलीकरण ने शहरों को ही नहीं गाँवों को भी तीव्रता से संक्रमित किया है, सूचना क्रान्ति, उपभोक्तावाद का प्रभाव शहरों तथा गाँवों पर किस हद तक पड़ा है, साथ ही वर्तमान भूमण्डलीकृत तथा उदारीकृत युग में पारिवारिक, सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था में क्या परिवर्तन आये हैं।

विषय सूची

1. पर्यावरणीय चिन्तन से सम्बंधित अवधारणा एवं दर्शन 2. हिन्दी कहानी की विकास यात्रा और पर्यावरण 3. हिन्दी भाषी भौगोलिक क्षेत्र और हिन्दी कहानी में पर्यावरण 4. शहरी-ग्रामीण परिवेश तथा हिन्दी कहानी में पर्यावरण 4. बदलता वैश्विक परिदृश्य और हिन्दी कहानी। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

38. यादव (धर्मवीर)
हिंदी की दलित आत्मकथाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. नीलम राठी
Th 24842

विषय सूची

1. साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की सैद्धांतिकी 2. दलित आत्मकथाएँ और समाजशास्त्रीय अध्ययन 3. दलित आत्मकथाएँ और समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रक्रियाएँ 4. स्त्री-दलित आत्मकथाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन 5. दलित आत्मकथाओं का सौन्दर्य विधान। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

39. यादव (नूतन)
नारी-छवि के निर्माण में हिन्दी की लोप्रिय पत्रिकाओं में प्रकाशित विज्ञापनों की भूमिका (1995 से 2005 तक)।
निर्देशिका : प्रो. सुधा सिंह
Th 24843

सारांश
(असत्यापित)

सभ्यता के विकास में जिस मुद्दे की सबसे ज्यादा उपेक्षा की गई वह है स्त्री विकास का मुद्दा |स्त्री विकास के मूल्याङ्कन की ईमानदार कोशिशों का हमेशा अभाव दिखा देता रहा है |इसके कारण भी अति स्पष्ट हैं | हज़ारों वर्षों से चली आ रही पितृसत्तात्मक व्यवस्था नारों को 'पूजनीय वस्तु' मानती आई है और उसे त्याग की मूर्ति घोषित कर अनेक जिम्मेदारियों ,बन्धनों से बांधकर उसे उस छवि में कैद कर दिया और उसी कैद में बने रहने को बाध्य भी कर दिया है |यही कारण है कि भारत में जब कभी भी स्त्रियों द्वारा अपनी परंपरागत छवि को तोड़ने के प्रयास किये गए हैं उन्हें पाश्चात्य प्रभाव कहकर नकारने की कोशिश की गई है |प्रस्तुत प्रबंध विज्ञापनों में नारी छवि से जुड़े विषयों एक मूल्याङ्कन प्रस्तुत करता है| भारतीय मानस में स्त्री के लिए प्रयुक्त भिन्न भिन्न शब्द उनकी संदर्भानुसार अर्थ छवियाँ , परंपरागत और आधुनिक सौंदर्य प्रतिमान, स्त्री की धार्मिक छवियों के विश्लेषण जैसे हिन्दू मुस्लिम आदि तथा उनकी क्षेत्रीय छवियों को भुनाने का कारोबारी प्रयास किस प्रकार विज्ञापन कंपनियाँ करती हैं | यानी किस तरह स्त्रियों से जुड़े इन विषयों को वे विज्ञापनों में प्रयोग कर उनकी छवि निर्माण की प्रक्रिया को बनाती बिगाडती हैं |विज्ञापन कंपनियाँ उत्पाद की बिक्री के लिए कभी आदिकालीन स्त्री से लेकर आधुनिक स्त्री की छवि तक का प्रयोग करती हैं और कभी इसे तोड़ने के लिए नए मिथकों को भी रचती हैं |भारत में सौन्दर्य उत्पादों की बेतहाशा बिक्री अपने आप में एक बड़ा तथ्य है कि किस तरह महिलाओं को बाह्य सौन्दर्य-जाल में गहरे तक फँसा दिया गया है | वहीँ विज्ञापन आधारित पूंजीवादी समाज ने उसे खुले आकाश में उड़ने के लिए नए हथियार भी दिए हैं और नया समाज भी | हर दिन नई उपलब्धियों के साथ वह सफलता के नए प्रतिमान छू रही है |

विषय सूची

1. मुद्रित माध्यम के अंतर्गत छवि निर्माण : अर्थ और अवधारणाएं 2. हिन्दी की लोकप्रिय पत्रिका : स्वरूप और संरचना 3. बदलती नारी छवि : सामाजिक विकास, स्त्री आंदोलन एवं सूचना तंत्र की भूमिका 4. विज्ञापनों में नारी छवि के विभिन्न रूपों और आयामों का विश्लेषण 5. विज्ञापनों में नारी छवि संबंधित विभिन्न संदेशों का अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

40. राय (नवनीत कुमार)
हिन्दी काव्यालोचन की भाषा का बदलता स्वरूप : द्विवेदी युग से नयी कविता तक।
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह
Th 24844

सारांश
(असत्यापित)

प्रस्तुत शोध प्रबंध में द्विवेदि युग से नयी कविता तक लगभग साठ वर्षों तक की हिंदी काव्यालोचन की भाषा या प्रतिमानों के बदलते स्वरुप का अध्ययन किया गया है| बीसवीं शताब्दी के पहले दशक में मिश्रबंधुओं के 'हिंदी नवरत्न'(१९१०) के प्रकाशन के साथ हिंदी में कव्यालोचन का प्रवर्तन होता है| उन्होंने इस पुस्तक में आलोचना की जिस पद्धति का प्रयोग किया उसे हम तुलनात्मक आलोचना के नाम से जानते हैं|उनके इस काम को तद्युगीन आलोचकों-पद्मसिंह शर्मा,कृष्णबिहारी मिश्र, लाला भगवानदीन-ने अपने-अपने ढंग से आगे बढाया| इसी समय महावीरप्रसाद द्विवेदी ने आलोचना की एक नयी धारा का प्रवर्तन किया जिसे आगे चलकर आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने व्यवस्थित ढंग से प्रतिष्ठित किया| हिंदी काव्यालोचन की भाषा को एक सैद्धांतिक और व्यवस्थित रूप देने शुक्ल जी की महती भूमिका रही है| छायावादी कवियों की आलोचना शुक्ल जी से सहमति और असहमति के बीच विकसित होती है| १९३६ ईस्वी के बाद हिंदी में काव्यालोचन की जिस नयी भाषा का प्रवर्तन होता है उसे हम प्रगतिवादी आलोचना के नाम से जानते हैं| रचनाकार की सामाजिक भूमिका पर बल तथा रूप की जगह अंतर्वस्तु को कृति के मूल्याङ्कन में तरजीह देना प्रगतिवादी आलोचकों की प्रमुख विशेषता है|लेकिन ठीक इसके उलट प्रयोगवाद में रूप पक्ष पर प्रमुखता से बात की गई|कविता में शिल्प पक्ष महत्वपूर्ण हो गया| १९४३ में तार सप्तक के प्रकाशन के बाद हिंदी कविता और समीक्षा वही नहीं रही|इस युग की काव्यालोचन की भाषा का मुख्य स्वर अनुभूति की प्रामाणिकता है| इस युग के आलोचकों ने प्रगतिवादी आलोचकों द्वारा कृति के सामजिक उत्स पर बल देने तथा शोषित वर्ग के संघर्ष तथा उसकी आकांक्षाओं को वाणी देने वाले साहित्य को रचना की श्रेष्ठता का एकमात्र प्रतिमान बनाने की कोशिश का प्रतिवाद किया तथा स्वतंत्र एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों से युक्त मनुष्य की साहित्य में प्रतिष्ठा की |

विषय सूची

1. द्विवेदी युग काव्यालोचन की भाषा का उदय और रीतिवादी आलोचक 2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ओर काव्यालोचन की भाषा का व्यवस्थित विकास 3. छायावादी कवियों की काव्यालोचन की भाषा 4. प्रगतिशील आलोचना की काव्यालोचन की भाषा 5. प्रयोगवाद और नयी कविता के दौर में काव्यालोचन और उसक भाषा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

41. रीता नामदेव
पद्मावत एवं रामचरितमानस में चित्रित प्रेम का तुलनात्मक अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह
Th 24845

सारांश
(असत्यापित)

अनेक विसंगतियों पर भक्तिकालीन साहित्यकार मौन रहा उन समस्याओं पर समाज व साहित्य का ध्यान बहुत देर से गया इसका परिणाम यह हुआ कि इन कुपरंपराओं की आयु बहुत लंबी हो गई। स्त्री-पुरुष को समान अधिकार से संबन्धित अनेक प्रश्न बेटाबेटी के जन्म व पालन पोषण में अंतर, अपनी संतान से लैंगिक भेद के आधार पर भेदभाव करना, स्त्री का जीवन चारदिवारी में कैद होना और उसे संपत्ति समझना, अनेक मानवीय अधिकारों से वंचित करना आदी 'पद्मावत' यों तो प्रेमआख्यनक काव्य है परंतु अपने पति से प्रेम करने वाली पतिपरायणा रूपवति पत्नी की नायक उपेक्षा कर दूसरी पत्नी के लिये चला जाता है। नागमती अपने भविष्य को असुरक्षित देखकर —भावी सौत आने के डर से तोता हीरामन को मारने का आदेश देती है उसी प्रकार कैकेयी 'रामचरितमानस' में अपने भविष्य को असुरक्षित देख कर कि कहीं भविष्य में सौत की चाकरी न करनी पड़े वह मंथरा की सलाह अनुसार भरत को राजतिलक और राम को चौदह वर्ष का वनवास माँगने के लिये सहमत हो जाती है। रत्नसेन की मृत्यु के बाद दोनों रानियां रत्नसेन के शव के साथ ही, चितारोहित होकर चिरवियोग को समाप्त कर देती हैं। नारी के इस चिरवियोग पर प्रत्यक्ष रूप से तो जायसी कुछ नहीं कहते, पर उनकी नायिकाएं स्त्रि-मानस को प्रस्तुत करने में पूर्ण सक्षम हैं। 'रामचरितमानस' में अनेक संबन्धों का प्रेम पूर्ण मिलन व वियोग वर्णन मिलता है। 'रामचरितमानस' में राम और सीता का मिलन तो हो जाता है परंतु इस मिलन के बाद सीता और राम कहीं पर भी संवाद करते नहीं मिलते।

विषय सूची

1. पद्मावत एवं रामचरितमानस में प्रेम का स्वरूप 2. पद्मावत एवं रामचरितमानस में प्रेम एक विश्लेषण 3. पद्मावत एवं रामचरितमानस में चित्रित विवाह पूर्व प्रेम 4. पद्मावत एवं रामचरितमानस में चित्रित प्रेम 5. पद्मावत एवं रामचरितमानस में चित्रित वियोग। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

42. वर्मा (रुचिका)
उन्नीस सौ नब्बे के बाद के हिंदी सिनेमा में शिक्षा की विभिन्न छवियों का अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. सुधा सिंह
Th 24846

विषय सूची

1. मनोविज्ञानः बाल मनोविज्ञान और शिक्षा मनोविज्ञान 2. शिक्षा की विभिन्न छवियों पर आधारित फिल्मों का समाजशास्त्रीय अध्ययन 3. हिंदी सिनेमा में शिक्षा की विभिन्न छवियाँ (परिचय) 4. हिंदी सिनेमा और सामाजिक यथार्थ 5. शिक्षा का विमर्श व हिंदी सिनेमा 6. समाज के आदर्श व यथार्थ में

हिंदी सिनेमा का गहन रूप से अध्ययन 7. शिक्षा की विभिन्न छवियों वाली फिल्मों का संक्षिप्त तुलनात्मक अध्ययन 8. उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

43. वर्मा (सुनील कुमार)
स्वातंत्र्योत्तर हिंदी यात्रा-साहित्य का सामाजिक सांस्कृतिक अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. मंजु मुकुल काम्बले
Th 24847

सारांश
(असत्यापित)

यात्रा करना यात्री के लिए मनोरंजन होने के साथ-साथ उसके साथ और सौंदर्यबोध को व्यापक भी बनाती है। यात्रा-वृत्तांत आधुनिक हिंदी गद्य की एक विधा है जिसे अंग्रेजी में 'ट्रेवलाग' कहते हैं। इसमें यात्री निर्वैयक्तिक भाव से यात्रा की जाने वाली जगह का इतिहास भूगोल लिखता है और अपनी निजी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति भी करता है। हिंदी यात्रा-साहित्य की एक लम्बी और समृद्ध परम्परा रही है। इसकी शुरूआत भारतेंदु युग से होती है। वर्तमान में रचनाकारों के साथ-साथ आलोचकों को भी यह गद्य विधा अपनी ओर आकर्षित करने लगी है। प्रस्तुत शोध प्रबंध पाँच अध्यायों में विभक्त है। पहला अध्याय हिंदी यात्रा-साहित्य की अवधारणा और स्वरूप से संबंधित है। इसमें 'यात्रा' शब्द के अर्थ और स्वरूप के साथ-साथ यायावर-साहित्य और यात्रा-साहित्य में साम्य-वैषम्य को भी बताया गया है। सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन में यात्रा-साहित्य की उपयोगिता को विभिन्न बिंदुओं के माध्यम से विश्लेषित किया गया है। द्वितीय अध्याय हिंदी यात्रा-साहित्य का आरम्भ और विकास (1947 तक) पर केन्द्रित है। तृतीय अध्याय में स्वातंत्र्योत्तर हिंदी यात्रा-साहित्य का विकास प्रस्तुत किया गया है। चतुर्थ अध्याय में हिंदी यात्रा-साहित्य में सामाजिक परिप्रेक्ष्य में विभिन्न आयामों को उद्घाटित किया गया है। पंचम अध्याय सांस्कृतिक अध्ययन से सम्बन्धित है। इसमें कला और ज्ञान-विज्ञान, लोक संस्कृति, सांस्कृतिक समन्वय और भाषिक विविधता के संदर्भ में विस्तार से प्रकाश डाला गया है। आरम्भ से अब तक यात्रा-साहित्य गुण और परिमाण दोनों दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध हुआ है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध में यात्रा-साहित्य में निरुपित समाज और संस्कृति के ही विभिन्न संदर्भो का प्रतिपादन किया गया है। अन्य परिप्रेक्ष्य और परिदृश्य भी प्रसंग के अनुसार उजागर होते रहे हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी यात्रा-साहित्य समाज और संस्कृति के अनुपम सौंदर्य को और समस्त सृजनात्मक सम्भावनाओं को उद्घाटित करता है। यात्रा-साहित्य लेखन का भविष्य उज्ज्वल है और यह गद्य-विधा निरंतर विकसित और समृद्ध होती रहेगी।

विषय सूची

1. यात्रा-साहित्य : अवधारणा और स्वरूप 2. हिंदी में यात्रा-साहित्य का आरम्भ और विकास (1947ई. तक) 3. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी यात्रा-साहित्य 4. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी यात्रा-साहित्य का सामाजिक परिप्रेक्ष्य 5. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी यात्रा-साहित्य का सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

44. श्रवण कुमार
हिन्दी दलित आत्मकथाओं का भाषिक अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. रजत रानी आर्य
Th 24848

सारांश
(असत्यापित)

वर्तमान युग विमर्शों का युग है। इन विमर्शों का सरोकार अमानवीय लोगों में मानवीय चेतना जागृत करने से हैं। दलित साहित्य में प्रचलित तमाम विधाओं में से 'आत्मकथा विधा' प्रमुख और महत्वपूर्ण है। प्रायः दलित आत्मकथाकारों ने आत्मकथा की भूमिका में यह मानते हुए लिखते हैं कि 'स्वयं के अनुभव को व्यक्त करते समय 'शारीरिक और मानसिक' यंत्रणाओं को पुनः महसूस करना पड़ता है। इसलिए इनके द्वारा लिखी गयी आत्मकथाएं अपने शोषणमूलक अनुभवों को व्यक्त करते समय प्रचलित अनुशासनात्मक भाषा का अतिक्रमण कर जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि ये आत्मकथाएं मुख्यधारा के भाषिक संरचनाओं को छोड़कर नए प्रकार के भाषिक संरचना को जन्म देती है। मसलन कि दलित आत्मकथाएं नए बिम्बों प्रतीकों का निर्माण करते हैं। जब दलित रचनाकार आक्रोश जाहिर करता है तब उसकी भाषा शालीनता प्रदान करने वाले शब्दों का पूर्णतः निषेध कर जाते हैं। शोषकों के चारित्रिक क्रूरता को सामने लाने के लिए अनेक नए शोषणमूलक एवं संवेदनहीन शब्दों, पद्यबंधों का प्रयोग करते हैं। आत्मकथा की प्रमाणिकता के लिए वे अपने समाज में जैसी भाषा चलन में होती हैं उसको उसी रूप में रख देते हैं। उदाहरण के रूप में हम देख सकते हैं कि आत्मकथाओं में प्रयोग होने वाली गाली-गलौज आदि से संबंधित प्रचलित शब्दों एवं भावों को व्यक्त करना। वहीं दलित आत्मकथाओं में प्रेम अभिव्यक्ति के लिए कविता, शेरों, शायरी का अधिक प्रयोग दिखाई देता है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि हिन्दी की दलित आत्मकथाओं के भाषिक संरचना में हमें यह दिखाई पड़ा है कि मुख्यधारा के भाषिक संरचना से इतर दलित आत्मकथा लेखक अपने अनुभवों के यथार्थ जगत के शब्द, बिम्ब, प्रतीक, लोकोक्ति एवं मुहावरों आदि का प्रयोग करने में किसी भी प्रकार का संकोच करता हुआ नहीं दिखाई पड़ता है।

विषय सूची

1. हिन्दी आत्मकथाओं का विकास 2. हिन्दी दलित आत्मकथाओं की कथावस्तु 1995 से 2005 तक की आत्मकथाओं का भाषिक अध्ययन (शब्द प्रयोग, शैली, बिंब, प्रतीक मुहावरा, लोकोक्ति) 4. 2005 से अब तक की दलित आत्मकथाओं का भाषिक अध्ययन (शब्द प्रयोग, शैली, बिंब, प्रतीक मुहावरा, लोकोक्ति) 5. हिन्दी दलित लेखिका की आत्मकथाओं का भाषिक अध्ययन (शब्द प्रयोग, शैली, बिंब, प्रतीक मुहावरा, लोकोक्ति)। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

45. शशि कान्ता शशि

मध्यवर्गीय चेतना का स्वरूप और समकालीन कविता (संदर्भ : विष्णु खरे, राजेश जोशी, अरूण कमल)।

निर्देशक : डॉ. रचना सिंह

Th 24849

सारांश

(असत्यापित)

समकालीन कविता अपने समय के जीवंत प्रश्नों एवं ठोस ब्यौरों को आत्मसात् करती आती है। यहाँ पलायन और निषेध के बदले जो जैसा है वैसा ही स्वीकार है की भावना है और साथ ही यह कविता बेहतर आज और सुन्दर कल की कामना का वरण करती है। विष्णु खरे राजेश जोशी एवं अरूण कमल तीनों ही रचनाकारों की रचनाधर्मिता जो कुछ बेहतर बचा है उसे बचा लेने को उद्यत है जो अरूण कमल के संदर्भ में अपनत्व है देशजता है नदी के रूप में 'गंगा' है अर्थात् प्रकृति और पर्यावरण तथा भाषा की सहजता और सारगर्भिता है। जब वे गंगा को प्यार कविता में कहते हैं- आज मैंने जाना / जो आदमी को प्यार नहीं करते / उनकी कोई गंगा नहीं / कोई मातृभूमि नहीं / कोई अपना तारा नहीं / तो स्वतः ही कविता के केन्द्र में मनुष्य और मानवता आ जाती है। वहीं विष्णु खरे अपनी कविताओं लालटेन जलाना, टेबिल, देर से आने वाले लोग, सिर पर मैला ढोने की अमानवीय प्रथा, विनाशग्रस्त इलाके से एक सीधी टी.वी. रपट आदि के द्वारा यथार्थ के गहरे एवं मार्मिक चित्र खींचते हैं। दूसरी ओर राजेश जोशी का काव्य-संसार सांप्रदायिक दंगों (भोपाल) एवं गैस-कांड की विभीषिका से गुजरकर भी कविता के सुन्दर और सौम्य पक्ष को संचित रखने का आग्रह रखता है जो कभी चांद तो कभी स्वप्न, कभी चिड़िया और कभी प्रकृति के भिन्न रूप हो जाते हैं। वस्तुतः संदर्भित तीनों ही कवि-विष्णु खरे, राजेश जोशी एवं अरूण कमल व्यक्तिगत स्तर पर अपनी वर्गीय सीमाओं का अतिक्रमण कर अपनी काव्य-संवेदना को विस्तृत करते आते हैं। इनके यहाँ लक्षित समुदाय निम्न-मध्यवर्ग या फिर सर्वहारा (निम्नवर्ग) हैं जिसे अरूण कमल ने समाज का अंतिम व्यक्ति या शंख-महाशंख कहा है परन्तु इससे इनकी मध्यवर्गीय प्रतिबद्धता में

कमी नहीं दिखती तथा भावनात्मक एवं काव्यात्मक दोनों ही स्तरों पर एक स्पष्टता परिलक्षित होती है।

विषय सूची

1. मध्यवर्ग : उद्‌भव और विकास 2. समकालीन कविता की पृष्ठभूमि 3. हिन्दी कविता और मध्यवर्गीय चेतना 4. विष्णु खरे, राजेश जोशी व अरूण कमल की कविताओं में मध्यवर्गीय चेतना 5. विष्णु खरे, राजेश जोशी व अरूण कमल की कविताओं का तुलनात्मक संदर्भ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

46. शाम्भवी
भूमंडलीकरण और स्त्री लेखन (प्रभा खेतान के उपन्यासों के संदर्भ में)।
निर्देशक : प्रो. कैलाश नारायण तिवारी
Th 24850

विषय सूची

1. भूमंडलीकरण : परिचय एवं परिदृश्य 2. भूमंडलीकरण : स्त्री लेखन और मूल्यबोध 3. प्रभा खेतान : व्यक्तित्व विश्लेषण प्रभा खेतान के उपन्यास : भूमंडलीकरण जनित स्थितियाँ और द्वंद्व 5. औपन्यासिक संरचना और भाषा : प्रभा खेतान के उपन्यासों के सन्दर्भ में। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

47. शुक्ल (सतेन्द्र कुमार)
वाचिक परंपरा में आल्हखंड के बदलते स्वरूप का भाषिक और समाजशास्त्रीय अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. अनिल राय
Th 24851

सारांश
(असत्यापित)

शोध-कार्य में सर्वप्रथम वाचिक परंपरा एवं आल्हखंड के परिचय तथा उसकी प्रामाणिकता एवं अप्रामाणिकता पर बात की गई है | साथ ही अन्य ग्रन्थों से आल्हखंड के साम्य-वैषम्य की भी चर्चा की गई है| आल्हखंड या 'परमाल रासो' वास्तव में उन दो अमर वीर 'बणस्फर्ण' राजपूत सपूतों की कहानी है, जो कि चंदेल वंश के प्रतापी शासक राजा 'परिमर्दिदेव वर्मन'(राजा परमाल) के सिपेसलार थे। आल्हखंड मूलतः बुन्देली की कथा होने के बावजूद तमाम दूसरे क्षेत्रों में गई और वहीं की कथा हो कर रह गई। वर्तमान में आल्हा बुन्देली के अलावा 'कन्नौजी, 'ब्रजी, 'भोजपुरी' और 'अवधी' उपभाषा में गाया, पढ़ा और सुना जाता है। आल्हा जिन क्षेत्रों में गया वहां के भाषा के शब्दों, रीति-रिवाजों, और खान-पान को भी आत्मसात कर लिया। आल्हा की कई गायन शैलियाँ हैं मसलन बुंदेलखंड की आल्हा गायकी,

अवधी आल्हा गायकी, कन्नौजी आल्हा गायकी, ब्रजी आल्हा गायकी और भोजपुरी आल्हा गायकी आदि। वर्तमान परिदृश्य में हम आल्हा को बड़े बजट की फिल्मों और रेडियो, टेलीवीजन में देख सुन रहे हैं जिसमें सबसे बड़ा योगदान अल्हैतों का है। बदलते परिवेश में अब महिलायें भी आल्हा गायन कर रही हैं| यह शोध-कार्य उन कलाकारों के पक्ष में खड़ा है जिन्हें हम अपनी साहित्यक, सांस्कृतिक और सामाजिक परंपरा का वाहक मानते तो हैं लेकिन उनकी आर्थिक स्थिति और रोटी, कपड़ा, मकान जैसी बुनियादी चीजों पर विचार नहीं करते हैं। इस प्रकार वाचिक परंपरा में आल्हखंड के बदलते हुए स्वरूप के लिए अनेक कारण उत्तरदायी हैं जिनमें भाषिक विकास, गायकी की पृथक शैलियाँ, आल्हा गायन में सक्रिय रूप से स्त्रियों का आगमन, अपने मुख्य कथ्य की परिधि लांघकर एक 'छंद' के रूप में स्थान बना लेना, छंद लय के साथ ही वाद्यों में परिवर्तन तथा तकनीकी और संचार का सहयोग आदि प्रमुख हैं। वर्तमान में यह आल्हा-ऊदल की गाथा न रहकर एक ओजस्वी छंद का रूप ले चुका है|

विषय सूची

1. आल्हखंड : अवधारणा और स्वरूप 2. आल्हखंड बोलियों के विविध पाठ 3. आल्हा गायकी ओर उसके विविध रूप 4. आल्हा गायन का वर्तमान परिदृश्य 5. आल्हखंड : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

48. शैलेन्द्र प्रताप
हिन्दी कहानी के विकास में हंस की भूमिका (राजेन्द्र यादव द्वारा संपादित हंस के विशेष संदर्भ में)।
निर्देशक : डॉ. संजय कुमार
Th 24852

सारांश
(असत्यापित)

हिन्दी कहानी के विकास में 'हंस' की भूमिका (राजेन्द्र यादव द्वारा संपादित 'हंस' के विशेष संदर्भ में) किसी भी भाषा या साहित्य के विकास में पत्र-पत्रिकाओं की अहम भूमिका होती है। ये विचार व रचना को आम-जन से जोड़कर उसे व्यापकता प्रदान करती हैं। साहित्य का पत्रकारिता से बहुत गहरा संबंध होता है। हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता के इतिहास में 'हंस' का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रेमचंद ने अपने समय की नब्ज को पहचानते हुए प्रगतिशील विचारों को मंच देने के निमित्त 'हंस' का प्रकाशन शुरू किया। इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए राजेन्द्र यादव ने उसे अपने समसामयिक सरोकारों से जोड़ा। बहसों और विवादों से परहेज किए बिना सामंती अवशेषों, पूंजीवादी नीतियों, साम्राज्यवादी षड्यंत्रों और साम्प्रदायिकता जैसे घातक प्रवृत्तियों के खिलाफ लगातार संघर्ष किया। 'हंस' एक कथा मासिक है और

कहानी उसके केन्द्र में रही है, इसलिए उसमें छपी कहानियों में उसकी विश्वदृष्टि साफ लक्षित होती है। उसने कहानी में प्रगतिशील जीवन मूल्यों को बढ़ावा दिया। साम्प्रदायिक, अलगाववादी, सामंती और तानाशाही शक्तियों से कहानी को दूर रखते हुए नई रचनाशीलता को प्रोत्साहित किया। नवीन भाषा व अनुभवों से युक्त दलित व स्त्री रचनाशीलता को प्रमुखता से प्रकाशित कर हिन्दी साहित्य फलक को बहुरंगी तथा लोकतांत्रिक बनाया। यही नहीं जीवन से कटी, कला और शिल्प के कौशल पर टिकी कहानियों को कहानी की मुख्यधारा पर हावी नहीं होने दिया। आप उसकी तमाम मान्यताओं से सहमत-असहमत हो सकते हैं लेकिन 'हंस' के बिना हिन्दी कहानी के इतिहास की कल्पना नहीं की जा सकती।

विषय सूची

1. हंस : एक परिचयात्मक इतिहास (सन् 1930 से 1952 तक) 2. राजेन्द्र यादव द्वारा संपादित हंस का आरम्भिक दौर 3. हंस और स्त्री विमर्श 4. हंस और दलित विमर्श 5. हंस और साम्प्रदायिकता की समस्या 6. समकालीन कहानी के विकास में राजेन्द्र यादव द्वारा संपादित हंस का योगदान। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

49. संदीप
आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में परंपरा और आधुनिकता।
निर्देशक : प्रो. मोहन
Th 24853

सारांश
(असत्यापित)

विषय 'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में परंपरा और आधुनिकता' हैं। वे 'मानवता' और 'मनुष्यता' पर विचार करते हैं। शोध के अध्याय में पहले अध्याय में परंपरा और आधुनिकता से विचार किया गया है। परंपरा और आधुनिकता जीवन और साहित्य को परिपूर्ण करती हैं। परंपरा अतीत की पर्याय नही है। आचार्य द्विवेदी परंपरा को गतिशील प्रक्रिया मानते हैं। आधुनिकता एक बौद्धिक विमर्श है उसके मूल में तर्क वितर्क, बौद्धिकता, वैज्ञानिकता बनी रहती हैं। दूसरे अध्याय में आचार्य रचनाकर्म और व्यक्तित्व है। उन पर शांतिनिकेतन और टैगोर जी से जुड़े रहे, उनके व्यक्तित्व पर कबीर,कालिदास इत्यादि साहित्यकारों का प्रभाव रहा है। शोध में साहित्यिक कृतियों का भी विश्लेषण किया है। तृतीय अध्याय में वस्तु विधान के अंर्तगत कथावस्तु, चरित्र -चित्रण में परंपरा और आधुनिकता को देखा गया है। उपन्यास की कथावस्तु ऐतिहासिक हैं परंतु कथानक आज के आधुनिक जीवन की व्याख्या करता है, इसी तरह इनके औपन्यासिक चरित्र पौराणिक और ऐतिहासिक होते हुए भी अपने कार्य से आधुनिक है। सभी पात्र अपने कार्यों से आधुनिक समाज की नींव रखते

हैं। वे वैचारिक मूल्यों की परंपरागत और आधुनिक व्याख्या करते हैं। चौथे अध्याय में इनके उपन्यासों में इतिहास, संस्कृति, धार्मिक भावना को परम्परा और आधुनिक दृष्टि से परखा गया है। द्विवेदी जी अपने उपन्यासों को 'विशुद्ध गप्प' की संज्ञा देते हैं। इनके धार्मिक पात्र राष्ट्रनिर्माण और चेतन तत्व को लेकर चलते हैं, और रूढ़ियों का विरोध करते है। पाँचवे अध्याय में भाषा और शिल्प को परम्परा और आधुनिक दृष्टि से मूल्यांकन किया गया है। वे पौराणिक शैली प्राक्कथन, उपसंहार, सन्दर्भ ग्रन्थ इत्यादि शैली का इस्तेमाल करते हैं, वे छदम नाम से साहित्यिक आलोचना करते हैं। भाषा मे तत्सम, काव्यात्मक और आलंकारिक शब्दावली का प्रयोग हैं। यह शैली अनूठी है, वे अपनी तरह के अलग साहित्यकार हैं। इनके उपन्यास परंपरा और आधुनिक दृष्टि से जीवन की सर्वोत्तम व्याख्या है।

विषय सूची

1. परंपरा और आधुनिकता 2. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी : व्यक्तित्व और कृतितव 3. आचार्य द्विवेदी के उपन्यासों में : वस्तुविधान, चरित्र चित्रण और वैचारिक मूल्य : परंपरा और आधुनिकता 4. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में इतिहास और संस्कृति : परंपरा और आधुनिकता 5. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास रू पारंपरिक भाषिक संरचना और आधुनिक अभिव्यंजना शैली। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

50. सहाय (काली)
समकालीन सामाजिक संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में भिखारी ठाकुर के साहित्य का अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. मोहन
Th 24854

सारांश
(असत्यापित)

भिखारी ठाकुर भले ही औपनिवेशिक काल में पैदा हुए हों किंतु उनका साहित्य समकालीन सामाजिक संदर्भों से जुड़ा हुआ है। लोक-जीवन के प्रति उनमें गहरी संपृक्ति थी इसलिए उन्होंने अपने रचना के माध्यम से यह दिखाने की कोशिश कर रहे थे कि लोक की पीड़ा बहुत बड़ी पीड़ा होती है। लेखक वही होता है जो लोक की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझकर उसका बयान करता है। जीवन-यापन के लिए कर्ज लेना और कर्ज चुकाना सबसे बड़ी पीड़ा है। भिखारी ठाकुर भोजपुरी क्षेत्र के स्त्री, दलित और पिछड़े समाज को अपने साहित्य के केंद्र में लेते हैं। उनके दुःख और तकलीफ को अपने साहित्य में व्यक्त करते हैं। भिखारी ठाकुर का साहित्य सामाजिक सरोकार का साहित्य है। वह उनके भोगे हुए यथार्थ से निर्मित हुआ है। भोजपुरी जीवन की समस्याओं को उन्होंने स्वयं अनुभव किया था। वह समस्या चाहे दयनीय स्थिति के कारण महानगरों की ओर पलायन की हो या पति के अभाव में घर में पड़ी पत्नियों

का अकेलापन, या बाल-वृद्ध विवाह की शिकार बालिकाएँ या संयुक्त परिवार की टूटती परंपरा, या स्त्रियों के आभूषण प्रेम के चलते अनैतिक बन गए संबंध, या वृद्धों की दुर्दशा अथवा जाति-व्यवस्था के कारण मिलने वाली मानसिक परेशानी या विभिन्न सामाजिक कुरीतियाँ या रुढ़ियाँ। भोजपुरी समाज की मुश्किलों, समस्याओं और संघर्षों को भिखारी ठाकुर ने अपने साहित्य और कला के माध्यम से समाज के सामने जीवंतता के साथ प्रस्तुत कर उसमें सुधार और बदलाव लाने का सार्थक प्रयास किया।

विषय सूची

1. समकालीन सामाजिक और साहित्यिक अर्थ संदर्भ 2. भिखारी ठाकुर का संपूर्ण साहित्य : एक विवेचनात्मक अध्ययन 3. सामाजिक संदर्भों की बुनावट और भिखारी ठाकुर के साहित्य की रचना-प्रक्रिया 4. लोक रंगकर्म की सामाजिक सार्थकता और भिखारी ठाकुर 5. विमर्शों का संदर्भ और भिखारी ठाकुर। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

51. साक्षी

यशपाल के कथा-साहित्य में राजनीति और व्यक्ति।

निर्देशिका : डॉ. विद्या सिन्हा

Th 24855

सारांश

(असत्यापित)

प्रस्तुत शोध प्रबंध में सर्वप्रथम राजनीति और व्यक्ति के विविध प्रकार के संबंधों को दर्शाया गया है। इसके उपरांत प्रगतिवाद, माक्र्सवाद, समाजवाद के अन्तर्संबंध द्वारा यशपाल की वैचारिकी व उनके लेखन उद्देश्य को बताया गया है। इसके लिए उनके कथेत्तर साहित्य व विशेष रूप से उनकी आत्मकथा को आधार बनाया गया है। तीसरा अध्याय जो उपन्यास साहित्य में राजनीति व व्यक्ति के संबंध को लेकर है, उसमें उनके लेखन-वैविध्य, राजनीतिक यथार्थ कल्पना सामाजिक विषमताएँ ऐतिहासिक सत्य व तथ्य को टटोला भी गया है। उनका कहानी साहित्य उपन्यास के अपेक्षाकृत सामाजिक विषमताओं व मानवीय यथार्थ को लिए हुए है, उसमें भी राजनीति व व्यक्ति के संबंध को दिखलाने का प्रयास हुआ है। वास्तव में यशपाल के कथा साहित्य में राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक- सभी पक्ष स्पष्टतः दर्शित होते हैं। इन सभी का मूल्यांकन माक्र्सवादी-समाजवादी दृष्टिकोण से यशपाल ने किया है। मेरा प्रयास यशपाल के कथा-साहित्य में भविष्य उपयोगी संभावनाएँ खोजने के साथ-साथ अन्य प्रचलित मतों को भी रखना था जिन्हें यशपाल ने अनायास या सायास रूप में नहीं लिया था। उनके शिल्प पक्ष को भी माक्र्सवादी साहित्यालोचन पद्धति व साहित्यिक शिल्प के यथार्थ व मानवीय

संवेद्यपरक आयामों द्वारा भी प्रस्तुत किया गया है। यशपाल के कथा-साहित्य को नए सिरे से व्याख्यायित करने का एक प्रयास हुआ है।

विषय सूची

1. राजनीति और व्यक्ति 2. प्रगतिवाद-मार्क्सवाद-समाजवाद-साम्यवाद सहसंबंध व यशपाल का वैश्विक परिदृश्य 3. यशपाल के उपन्यास 4. यशपाल का कहानी साहित्य 5. यशपाल के कथा साहित्य का शिल्प। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

52. सिंह (अमित कुमार)
यशपाल और अमृतलाल नागर के उपन्यासों मे यौनिकता के प्रश्न।
निर्देशिका : डॉ. चित्रा रानी
Th 24856

सारांश
(असत्यापित)

मनुष्य जीवन और शरीर की कुछ नैसर्गिक आवश्यकताएं होती हैं, जिनमें यौन, काम या सेक्स उल्लेखनीय और महत्त्वपूर्ण है। इस विषय को लेकर विश्व में कई तरह की अवधरणाएं देखने को मिलती हैं। विश्व के विभिन्न समाज का इस विषय के प्रति अलग-अलग दृष्टिकोण रहा है, परन्तु यह जीवन का परम सत्य है, जिसे नकारा नहीं जा सकता है। सृष्टि को आगे बढ़ाने में और व्यक्ति चरित्र निर्माण में इन्हीं भावों का योगदान रहता है। यही कारण है कि भारत में इन भावनाओं को लेकर कई ग्रन्थ लिखे गये। पाश्चात्य जगत में भी कई विद्वानों ने इस विषय पर सिद्धान्तवादी दर्शन का प्रतिपादन किया है। सदियों से इस विषय पर विद्वानों के मतों का खण्डन-मण्डन होता आ रहा है। यशपाल जहाँ क्रांतिकारी तथा समाजवादी विचारधारा से युक्त होने के कारण पुरातन तथा आध्यात्मिक शक्तियों को झकझोर कर नष्ट कर देने के आग्रही हैं वहीं नागर जी भारतीय परम्परावादी चिंतनधरा के प्रति आस्थावान रहते हुए उसमें सुधरवादी दृष्टिकोण के आग्रही हैं। समग्र दृष्टिकोण से देखा जाय तो यशपाल तथा नागर जी का यौन चिंतन समाज को नये प्रकार से सोचने के लिए विविध आयाम प्रस्तुत करता है। समाज में बढ़ती यौन हिंसा/समस्या, स्त्रा-पुरूष के विकृत होते सम्बन्ध, भौतिक और शरीरवादी जीवन मूल्यों के उभरते अश्क कहीं न कहीं यशपाल और अमृतलाल नागर के उपन्यासों के पुनरावलोकन के लिए विवश कर देते हैं। समाज में यौनिकता और प्रेम को लेकर नवीन भौतिकवादी दृष्टिकोण कई प्रश्न उठाते हैं। शारीरिक शोषण, बलात्कार तथा असामान्य शारीरिक सम्बन्ध आदि विकृत और कुंठित मानसिकता के परिचायक हैं। इन सब प्रश्नों पर आज विचार करने की आवश्यकता है। इस शोध के माध्यम से इन्हीं सत्यों को तलाशने की कोशिश की गयी है।

विषय सूची

1. यौनिकता : अर्थ, अवधारणा और स्वरूप 2. यशपाल : सामाजिक और मनोवैज्ञानिक संदर्भों में यौन चिंतन 3. अमृतलाल नागर : सामाजिक और मनावैज्ञानिक संदर्भों में यौन चिंतन 4. यशपाल तथा अमृतलाल नागर के यौनिकता केन्द्रित उपन्यासों का शिल्पविधान 5. यशपाल और अमृतलाल नागर के उपन्यास तुलनात्मक संदर्भ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

53. सिंह (प्रशान्त कुमार)
प्रयोगवाद संबंधी प्रमुख बाद-विवाद और हिंदी आलोचना।
निर्देशक : प्रो. चन्दन कुमार
Th 24857

सारांश
(असत्यापित)

शोध-विषय के अंतर्गत उन सभी विमर्शों को यहाँ शामिल किया है, जो प्रयोगवाद से संबंधित हैं। प्रयोगवाद संबंधी वाद-विवाद तब शुरु होता है, जब 1943 में 'तार सप्तक' का प्रकाशन हुआ। 'तार सप्तक' की समीक्षा कहते हुए नन्ददुलारे वाजपेयी तार सप्तक की कविताओं को पहले पहल 'प्रयोगवादी रचनायें' कहते हैं। जिसका प्रतिवाद अज्ञेय 'दूसरा सप्तक' की भूमिका में करते हुए कहते हैं "प्रयोग का कोई वाद नहीं है। हम वादी नहीं रहे, नहीं हैं। न प्रयोग अपने-आप में इष्ट या साध्य है। ठीक इसी तरह कविता का भी कोई वाद नहीं है; कविता भी अपने-आप में इष्ट या साध्य नहीं है। अतः हमें 'प्रयोगवादी' कहना उतना ही सार्थक या निरर्थक है जितना हमें 'कवितावादी' कहना।" और यही वह प्रस्थान बिंदु है जहाँ से प्रयोगवादी काव्यान्दोलन हिंदी आलोचना के केन्द्र में आ जाता है। कुछ विद्वानों में इसकी अवधारणा व स्वरूप को लेकर मतभेद है तो कुछ समीक्षकों को इसके कालक्रम व नामकरण को लेकर। तो कुछ विद्वान इसे प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के द्वन्द्व के रूप में देखते हैं। ऐसे ही प्रयोगवाद और प्रपद्यवाद, प्रयोगवाद और नई कविता, आधुनिकता और परंपरा, व्यक्ति और समाज आदि से संबंधित पक्षों पर समीक्षकों में वाद-विवाद देखने को मिलता है। कुछ आलोचक तो इस काव्यान्दोलन को पाश्चात्य साहित्य की नकल मानते हैं तो कुछ देशकाल की तत्कालीन परिस्थितियों से उपजा साहित्यिक आन्दोलन मानते हैं। संभवतः प्रयोगवाद ही हिंदी कविता के इतिहास में ऐसा काव्यान्दोलन है जिस पर सबसे ज्यादा वाद-विवाद हुआ है। चाहे उसका भाव पक्ष हो या शिल्प पक्ष, काव्य के उद्देश्य को लेकर हो या सामाजिक व साहित्यिक उत्तरदायित्व को लेकर। सभी पक्षों को लेकर इस सम्पूर्ण काव्यान्दोलन पर हिंदी आलोचना में वाद-विवाद होते रहे हैं। इस शोध-विषय के अंतर्गत इन्हीं वाद-विवाद को निष्पक्षता से देखने का प्रयास किया है।

विषय सूची

1. प्रयोगवाद : पृष्ठभूमि और अवधारणा 2. प्रयोगवाद संबंधी आरम्भिक वाद-विवाद 3. प्रयोगवाद संबंधी विवादों का देशकाल 4. प्रयोगवाद संबंधी विवादों का अंतःसंगठन 5. प्रयोगवाद का वैचारिक पक्ष संबंधी वाद-विवाद। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

54. सिंह (रचना)
समकालीन हिंदी दलित कविता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. श्यौराज सिंह बेचैन
Th 24858

सारांश
(असत्यापित)

दलित विषयक लेखकों ने स्वयं और दलित समाज के साथ हो रहे जातिवादी भेदभाव, गरीबी व लैंगिकता से प्रभावित होकर अपनी कविताएं लिखी है। यदि भारतीय समाज दलितों के साथ किसी भी स्तर पर भेदभाव नहीं करता, तो ऐसी कविताएं दलित लेखक नहीं लिखतें। भारत की आजादी के बाद पढ़े-लिखे नौकरीपेशा दलितों ने अपने समाज के साथ हो रहे भेदभाव का विरोध अपनी कविताओं के माध्यम से किया है। पैसे की ताकत ने उन्हें प्रकाशन का बल प्रदान किया। नए कानून ने समाज को बदलने पर मजबूर किया है, इसके कारण भारतीय समाज दलित साहित्य को पढ़ने लगा है। सभी दलित कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज में दलितों की बेहतरी के लिए चेतना जगाने का प्रयास किया है। साथ ही गैर-दलितों के प्रत्येक अमानवीय व्यवहार का खुलकर विरोध करते हुए,उसे अपनी कविताओं में वर्णित किया है। दलित कविताओं में विरोध का स्वर कहीं बहुत ही आक्रामक लगता है, तो कहीं बेहद ही करूणा पैदा करता है। हालांकि आजादी के बाद भारत में दलितों की स्थिति में आए बदलाव के कारण भारतीय समाज द्वारा दलितों को देखने के नजरिए में जो क्रांतिकारी परिवर्तन आया है, उस तरफ दलित कवियों का ध्यान कम ही गया है। वैसे आजादी के बाद दलितों की स्थिति में जो बदलाव आया है, वो दलितों को कम लगता है। संविधान दलितों को संपूर्ण, सम्मानित मनुष्य का दर्जा देता है, लेकिन दलित अभी ऐसी स्थिति के बरक्स नहीं पहुंच पाया है। ऐसे में समकालीन हिन्दी दलित कविता भारतीय समाज और भारतीय भाषा से जुड़कर समाज में दलितों के प्रति दर्द और उनके शोषण के खिलाफ गुस्से का प्रदर्शन व संपूर्ण समाज की सोच बदलने के लिए लिखा जा रहा है। भारतीय समाज से जब दलितों की समस्या का अंत हो जाएगा, तब दलित कविताओं का लेखन स्वतः ही समाप्त हो जाएगा।

विषय सूची

1. समाजशास्त्रीय आध्ययन की सैद्धांतिक दृष्टि 2. दलित साहित्य की अवधारणा और हिन्दी के प्रमुख दलित कवि 3. समकालीन हिन्दी दलित कविता के मुख्य स्वर 4. समकालीन हिन्दी दलित कविता के अन्य सरोकार 5. हिन्दी दलित कविता का भाषिक पक्ष। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

55. सिंह (रमा शंकर)
हिंदी नवगीत में ग्रामीण समाज का बदलता स्वरूप।
निर्देशिका : डॉ. राज रानी शर्मा
Th 24859

विषय सूची

1. ग्रामीण समाज की अवधारणा 2. नवगीत का उद्‌भव और विकास 3. नवगीत में ग्रामीण समाज की अभिव्यक्ति के विविध आयाम 4. नवगीत में ग्रामीण और नगर समाज का तुलनात्मक विवेचन 5. नवगीत और समकालीन कविता में चित्रित ग्रामीण समाज का तुलनात्मक अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

56. सिंह (रामप्रकाश)
हिंदी उपन्यासों में व्यंग्य-तत्व का विश्लेषण (1980-2010)।
निर्देशक : प्रो. कैलाश नारायण तिवारी
Th 24860

सारांश
(असत्यापित)

प्रथम अध्याय 'व्यंग्य साहित्य अवधारणा और स्वरूप' है। इसमें व्यंग्य की परिभाषा, व्यंग्य के तत्व और व्यंग्य के स्वरूप विश्लेषण के विषय में बताया गया है। व्यंग्य साहित्य की सर्वप्रमुख विधा है, जिसके द्‌वारा रचनाओं के माध्यम से समाज की तात्कालिक स्थितियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जाता है। रचनाकार व्यंग्य के माध्यम से समाज के कमजोरियों के प्रति सचेत करता है तथा तीव्र व्यंग्य बाणों से जनता या पाठक को जागृत भी करता है। द्‌वितीय अध्याय 'प्राचीन साहित्य में व्यंग्य का इतिहास' है। इसके अंतर्गत संस्कृत साहित्य में व्यंग्य का स्वरूप, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में व्यंग्य का स्वरूप और प्रारम्भिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य का स्वरूप इन सबके बारे में बताया गया है। तृतीय अध्याय 'हिंदी उपन्यास में व्यंग्य-तत्व की स्थिति' है। इसमंे भारतेंदु युगीन व्यंग्य साहित्य, स्वतन्त्रतापूर्व हिंदी उपन्यास और व्यंग्य और सवातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास और व्यंग्य पर चर्चा की गई है। चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत '1980-2010' तक के उपन्यासों मंे चित्रित व्यंग्य का स्वरूप' है। इसके अन्तर्गत तीन उप अध्याय हैं। इन उपअध्यायों में 1980-1990 के बीच प्रकाशित उपन्यासों में व्यंग्य, 1991-2000 के बीच प्रकाशित उपन्यास में व्यंग्य,

2001-2010 के बीच प्रकाशित व्यंग्य उपन्यासों के विषय में बताया गया है। 1980-2010 तक जिन उपन्यासों में सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन की समस्याओं को चित्रित किया गया है वे इस प्रकार हैं

कुरु-कुरु स्वाहा (1983)- मनोहर श्याम जोशी
दारुलशफा (1985) - राजकृष्ण मिश्र
मैं, मैं और केवल मैं (1993) - शरद जोशी
नरक यात्रा (1994) - ज्ञान चतुर्वेदी
आदमी स्वर्ग में (2004) - विष्णु नागर
काशी का अस्सी (2006) - काशीनाथ सिंह

पंचम अध्याय 'व्यंग्यपरक हिंदी उपन्यसों की संरचना और भाषा' है। इसके अंतर्गत व्यंग्यपरक हिंदी उपन्यासों की चरित्र योजना व्यंग्यपरक हिंदी उपन्यासों की भाषा और व्यंग्यपरक हिंदी उपन्यासों की कथा शैली पर विचार किया गया है।

विषय सूची

1. व्यंग्य साहित्य : अवधारणा और स्वरूप 2. प्राचीन साहित्य में व्यंग्य का इतिहास 3. हिन्दी उपन्यासों में व्यंग्य तत्व की स्थिति 4. 1980-2010 तक के उपन्यासों में चित्रित व्यंग्य का स्वरूप 5. व्यंग्यपरक हिन्दी उपन्यासों की संरचना और भाषा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

57. सिंह (विक्रम)
नवगीत में भारतीय समाज और लोक-संस्कृति का चित्रण।
निर्देशक : डॉ. बागेश्री चक्रधर
Th 2461

विषय सूची

1. नवगीत : उद्‌भव एवं विकास 2. भारतीय समाज एवं लोक-संस्कृति की अवधारणा 3. नवगीत में चित्रित वत्रमान भारतीय समाज 4. नवगीत में चित्रित लोक-संस्कृति के विविध आयाम 5. नवगीत में चित्रित जनजीवन का समग्र रूप एवं इसका मूलयांकनपरक अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

58. सिंह (सत्येन्द्र प्रताप)
हिन्दी कथा साहित्य में लोकतंत्र का सवाल और अन्तर्लिंग समाज।
निर्देशिका : प्रो. कुमुद शर्मा
Th 24862

सारांश
(असत्यापित)

वर्तमान समय हाशिए के समाज की समस्याओं और उसकी अस्मिताओं के घायल इतिास को उलटने-पलटने का दौर है। अस्मिताओं का अधिकार की इसी चेतना ने साहित्य और समाज में कई महत्वपूर्ण बदलाव किये हैं जिसकी वजह से आज हाशिए के कई समुदाय अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष की मुद्रा में हमें उपस्थित मिलता है। प्रस्तुत शोध के प्रथम अध्याय से ही लोकतंत्र में किन्नरों का स्थान तलाशते हुए उसमें उनकी अनुपस्थिति के प्रमुख कारण व गुजाइंश को लोकतंत्र के भारतीय संस्करण व भारतीय समाज के साथ परम्परागत रूप से विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। दुसरे अध्याय में लैंगिक विमर्श की परम्परा का क्रमबद्ध व तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इनकी अनुपस्थिति व किन्नरों के लिए उपलब्ध जगह का विश्लेषण किया गया है, इसके साथ ही तृतीय अध्याय में कथा साहित्य में उपस्थित इनके स्वरूप का सामाजिक व ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ ही वर्तमान में विद्यमान चुनौतियों के सापेक्ष चित्राण का विश्लेषण किया गया है। वही चतुर्थ अध्याय में अन्तर्लिंगी समाज की प्रमुख समस्याओं को कालानुक्रमी पद्धति के माध्यम से विश्लेषित करते हुए उन समस्याओं का ही वर्णन नहीं किया गया है अपितु उनके पीछे छिपे कारणों का भी विश्लेषण किया गया है, और इन समस्याओं के लिए जिम्मेदार लोगों को उनकी कमियों के साथ आईना दिखाने का प्रयास किया गया है। वर्तमान दौर वंचितों एवं पीड़ितों की अस्मिता का दौर जिसका प्रमाण दलित, स्त्री तथा आदिवासी विमर्श है भी इन विमर्शों का भी तुलनात्मक दृष्टि से अन्तर्लिंगी समाज के साथ रखते हुए विश्लेषण किया गया है। पंचम अध्याय में अन्तर्लिंगी समाज की अपनी भाषा का भाषा विमर्श व लैंगिक विमर्श के तुलनात्मक अन्त्रलिंगियों की भाषा जिसे हेय दृष्टि से देखा जाता है, उसकी उपस्थिति की संभावनाओं व प्रमुख चुनौतियों की स्पष्ट किया गया है।

विषय सूची

1. लोकतंत्र की अवधारणा औ भारतीय समाज 2. भारतीय समाज और अन्तर्लिंगी 3. हिन्दी कथा साहित्य में अन्तर्लिंगी समाज का स्वरूप 4. हिन्दी कथा साहित्य में अन्तर्लिंगी समाज की समस्याये 5. भाषा और लैंगिकता का सवाल तथा अन्तर्लिंगी। उपसंहार। साक्षात्कार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

59. सिंह (सुखजीत)
समकालीन हिंदी आलोचना : सिद्धांत और अवधारणएँ (1990 के बाद से अद्यतन)।
निर्देशक : डॉ. मंजु कुकुल काम्बले
Th 24863

विषय सूची

1. आलोचना का स्वरूप और हिंदी आलोचना परम्परा 2. समकालीन हिंदी आलोचना : एक परिचय 3. समकालीन हिंदी मार्क्सवादी आलोचना 4. समकालीन हिंदी दलित आलोचना 5. समकालीन हिंदी नारीवादी आलोचना 6. समकालीन हिंदी आलोचना की अन्य महत्वपूर्ण धाराएं। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

60. सुनीत कुमार
बीसवीं सदी के हिन्दी पत्र-साहित्य के विकास का आलोचनात्मक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. सुनील कुमार तिवारी
Th 24864

विषय सूची

1. हिन्दी पत्र-साहित्य : उद्‌भव और विकास 2. हन्दी पत्र-साहित्य : स्वरूप विवेचन 3. हन्दी पत्र-साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन 4. हन्दी गद्य विधाएं और पत्र-साहित्य 5. हन्दी पत्र-साहित्यः समकालीन संदर्भ । पत्र-साहित्य : प्रासंगिकता का प्रश्न। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

61. सुमनलता
भक्तिकालीन प्रतिनिधि कवियों के नीतिपरक काव्य में सामाजिक संबंध एवं संघर्ष।
निर्देशक : डॉ. विजय शंकर मिश्र
Th 24865

सारांश
(असत्यापित)

नीतिपरक व्यवहार मानव व समाज के लिए कल्याण एवं विकास का मार्ग है। मनुष्य के जीवन में समस्याओं का आगमन व निर्गमन लगा रहता है। आवश्यकता यह है कि उनका समाधान नीति-अनुसार हो। भक्तिकालीन नीतिपरक कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से समाज को सतपथ पर चलने के लिए प्रेरित किया है। उन्होंने इस उद्‌देश्य की पूर्ति हेतु पुरानी जर्जर मान्यताओं व कर्मकाण्डों को तोड़ा तथा धर्म, परंपरा, संस्कृति व अध्यात्म में रचनात्मक सुधार करने का प्रयास किया। ये कवि भक्तिकालीन समय शासकों के वैभव व विलासिता का युग था। उच्च वर्ग निम्न वर्ग का शोषण करके अपनी सुविधाएँ जुटाता था। अपने कत्र्तव्यपथ से अनभिज्ञ उच्च वर्ग के खिलाफ आवाज़ उठाना सरल कार्य नहीं था। फिर भी कबीर, जायसी, सूर, तुलसी व रहीम ने अपने आत्मपरक ज्ञान के माध्यम से समाज को नीति अनुसार आचरण करने के लिए प्रेरित किया। समाज की कुरुप मान्यताओं एवं रूढ़ियों के प्रति उनका विरोध तत्कालीन समाज के साथ-साथ वर्तमान में भी प्रासंगिक है। मध्यकालीन समाज में जाति प्रथा, छुआछूत, वर्ण व्यवस्था आदि कुरीतियाँ विद्‌यमान थी। इनके रहते समाज का विकास होना असंभव था। मानव के साथ पशु समान व्यवहार कर रहा

था। उसे किसी के आत्मसम्मान व गौरव की कोई चिंता नहीं थी। साथ ही परिस्थितियाँ ऐसी हो गई थी कि परिवार टूटने लगे थे। आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण लोग अपने बच्चों को बेचने पर मजबूर हो गए थे। ऐसी निकट स्थिति मंे इन कवियों ने लोगों को धैर्य, संयम, संतोष व सत्य के महत्व से परिचित करवाया। इनके द्वारा दिखाया मार्ग तत्कालीन समय के साथ-साथ आज भी प्रासंगिक है।

विषय सूची

1. भक्तिकालीन प्रतिनिधि कवियों का नीतिपरक काव्य 2. सामाजिक संबंधों का स्वरूप और उनमें संघर्ष 3. भक्तिकालीन नीतिपरक-काव्य में संबंधों के विविध रूप 4. पारिवारिक संबंध और संघर्ष 5. सामाजिक संबंधों में धर्म, परम्परा, संस्कृति और अध्यात्म का हस्तक्षेप। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

62. हंसराज

हिंदी पत्रकारिता पर प्रौद्योगिकीय परिवर्तन का प्रभाव।

निर्देशक : डॉ. कैलास प्रकाश सिंह

Th 24866

सारांश

(असत्यापित)

मीडिया सामाजिक उद्बोधन का महत्वपूर्ण अंग है। प्रारम्भिक दौर का मीडिया जिस उद्देश्य को लेकर चला था उसे नवजागरण काल स्वतंत्रता संग्राम के आंदोलन तथा भारत में विभिन्न क्षेत्रों में होते सामाजिक आंदोलन के रूप में देखा जा सकता हैं। नवजागरण काल की पत्रकारिता ने सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्त्री शिक्षा से लेकर जातिभेद छुआछूत रूढ़िगत मान्यताओं विधवा विवाह का प्रचलन तथा स्त्रियों के प्रति दोयम दर्जे की मानसिकता के विरूद्ध प्रचार-प्रसार नव जागरण काल में पत्रकारिता के माध्यम से ही संभव हो सका था। यह पत्रकारिता भारतीय जनमानस में अंग्रेजी राज के विरुद्ध आंदोलन को भी हवा देती रही। भारत में छापाखाना का विकास मीडिया की लोकप्रियता के साथ-साथ होता रहा है। अतः स्वतंत्रता पूर्व का मीडिया अपने समय का स्पष्टवादी सक्रिय मीडिया रहा है। स्वतंत्रता के बाद की हिंदी पत्रकारिता उस गति से विकसित नहीं हो पायी जिसकी अपेक्षा की जाती थी। आजादी के बाद आर्थिक रूप से विपन्न भारत के लिए संचार प्रौद्योगिकी को वैश्विक स्तर पर ले जाने की हैसियत नहीं थी। पत्रकारिता का क्षेत्र जैसे-जैसे जनमानस में अपनी पैठ बनाता गया उसी अनुसार उसका नया प्रौद्योगिक रूप भी विकसित होता गया। समाचार पत्र सूचनाओं की प्राप्ति का महत्वपूर्ण माध्यम बन गए। सन् साठ के बाद संचार प्रौद्योगिकी का क्रमशः तेजी से विकास होता गया इसके पीछे जन सामान्य की सूचना प्राप्ति संबंधी आवश्यकता ही थी। नवसंचार प्रौद्योगिकी आधुनिक युग की संचार

सेवा में महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। आधुनिक युग में पत्रकारिता का दायरा बढ़ा है। दूर-दराज के क्षेत्रों में इंटरनेट की सेवाएं उपलब्ध होने लगी हैं। उपेक्षित और पिछड़े क्षेत्रों की खबरें पत्रकार अब सहजता से एकत्रित कर अपने मीडिया संस्थानों तक भेजने लगे हैं। देश में लोकतंत्र के विकास में पत्रकारिता महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगी है। यह सब कुछ नव सूचना संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से ही संभव हो पाया है।

विषय सूची

1. हिंदी पत्रकारिता प्रौद्योगिकीय विकास की प्रक्रिया 2. स्वतंत्रता के बाद की हिंदी पत्रकारिता 3. विकसित प्रौद्योगिकीय उपकरणों के कारण हिंदी पत्रकारिता का विकास 4. संचार क्रांति एवं नवविकसित प्रौद्योगिकी का हिंदी पत्रकारिता पर प्रभाव 5. कम्प्यूटर का उपयोग और हिंदी पत्रकारिता 6. सूचना प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया 7. हिंदी पत्रकारिता में वेब साईट, डिजाइन 8. पत्रकारिता और साइबर कानून 9. नयी संचार प्रौद्योगिकी के कारण सेंसर बोर्ड की बढ़ती सक्रियता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

63. हेमन्त रमण रवि
हिन्दी रंगमंच के सन्दर्भ में भोजपुरी लोकनाट्य रूपों का अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. कैलाश नारायण तिवारी
Th 24867

विषय सूची

1. भारतीय लोकनाट्य परंपरा और स्वरूप 2. भोजपुरी लोकनाट्य रूपों की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति 3. भाजपुरी लोकनाट्य रूपों से प्रभावित हिन्दी रंगमंचीय प्रयोग 4. हिन्दी नाट्य लेखन पर भोजपुरी लोकनाट्य रूपों का प्रभाव 5. भोजपुरी लोकनाटकों का रंगमंचीय विश्लेषण। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।